पुस्तक का नाम—
उवसग्गहर स्तोत्र

लेखक—
भद्रबाहु स्वामी

भूमिका-लेखक—
अगर चन्द जी नाहटा

सम्पादक—
मुनि प्रकाश विजय

प्रकाशक—
श्री जैन श्वेताम्बर महासभा उ.प्र.

प्रकाशन तिथि—
कार्तिक शुक्ला २ वि.२०२४

मूल्य—
एक रुपया पचास पैसे

मुद्रक—
श्री रामचन्द्र जैन B.A. प्रभाकर,
जैनागम रिसर्च प्रिंटिंग प्रैस, चावल-
बाजार (आर्दा फला) लुधियाना।

समर्पित

जिनकी अमृतमय वाणी द्वारा जीवन का विकास
किया और त्याग वैराग्य तपस्या व शासन सेवा
की प्रेरणा पाकर मोक्ष मार्ग की भावना
वढी, उन सरल स्वभावी, पवित्रात्मा
महान वालब्रह्मचारी पजाव-
केसरी आचार्य भगवन्

श्री मद्विजय वल्लभ सूरीश्वर जी महाराज

परमोपकारी परदादा गुरुश्री की पावन पुनीत स्मृति मे

भूमिका

लेखक —अगर चन्द नाहटा

(उवसग्गहर स्तोत्र के रचयिता और तत् सम्बन्धी साहित्य)

गुणी व्यक्तियो के गुणो की स्तवना व सेवा अवश्य ही गुणी बनने का प्रशस्त मार्ग है। मनुष्य की पूजा बाह्य देश वय, जाति, से नहीं होती पर गुणो से ही होती है। "गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्ग न च वयः।"

आत्मा अनन्त गुणो का भंडार है। कर्मों के संयोग से उसके वे ज्ञान, दर्शन, चारित्र, आनन्द- शक्ति आदि गुण दब-से जाते हैं। अतः साधारण मनुष्य गुण और दोषो का सम्मिलित संग्रह होता है। पर विशिष्ट व्यक्ति दोषो से दूर रहते हुये गुणों का विकास करते रहते हैं। अन्त मे समस्त दोषो का क्षय और समस्त गुणों का परिपूर्ण विकास हो जाने पर उन्हे परमात्मा संज्ञा प्राप्त होती है। ऐसे व्यक्तियों की स्तुति, गुणानुवाद नाम-स्मरण, जाप, आदि करने से पापो का क्षय और पुण्य का संचय होता है, उसमें दो राय नहीं हो सकती। गुणी व्यक्ति की पूजा, भक्ति, उपासना, सेवा गुणकारी हैं ही। उनके नाम मात्र पवित्र हृदय से लेने पर सद्भावों की वृद्धि होती है। उनका आदर्श चरित्र नाम के साथ हृदय-पटल पर चित्रित हो जाता है। इस लिये नाम स्मरण या जाप को सभी सम्प्रदायो ने अत्यधिक महत्त्व दिया है। मूर्ति-पूजा को अमान्य करने वाले व्यक्ति भी नाम के माहात्म्य को श्रद्धा-सहित स्वीकार करते हैं। जैन दर्शन में चार

निक्षेपे बतलाये गये हैं पहला नाम—निक्षेपा है। स्थापना का नम्बर उसके बाद का है।

नाम गुण-विशिष्ट भी होते है और गुण रहित भी। गुण विशिष्ट नाम के साथ गुण की भी स्मृति हो आती है अतः जिस व्यक्ति का नाम लिया जाता है उसके गुणों का बखान भी किया जाता है जिससे उस नाम और पद की सार्थकता हृदयाकाश पर अंकित हो जाती है। जैसा कि पहले कहा गया है महापुरुष अनन्त गुणों के भण्डार होते है। उनका वर्णन किसी गुण विशेष को लेकर ही किया जा सकता है। समस्त गुणो का वर्णन कोई भी नहीं कर सकता क्योकि शब्द और वाणी सीमित है गुण है असीम। एक व्यक्ति नहीं अनेक व्यक्ति भी अनेक जन्मों तक किसी महापुरुष के गुणों का पूर्ण वर्णन करने में पूर्ण समर्थ नही होते। जब उनके चरित्र और विशिष्टता पर ध्यान जाता है तो नित्य नई-नई बातें ध्यान में आने लगती है।

जैन धर्म में सर्वाधिक उच्च-स्थान तीर्थकरों का है क्योंकि वे धर्म रूप तीर्थ का प्रवर्त्तन करते हैं। साधु,साध्वी, श्रावक, श्राविका इन चारों प्रकार के धार्मिक व्यक्तियों के संघ-रूप तीर्थ की स्थापना करने से ही वे तीर्थंकर कहलाते है। जैन मान्यता के अनुसार ये संसार अनादि काल से चला आ रहा है और इसमें अनेक तीर्थकर पहले हो चुके है कुछ अब भी हैं और अनेकों आगे होने वाले हैं। भरत क्षेत्र के दक्षिण भाग में या दक्षिण भरत क्षेत्र में इस अवसर्पिणि काल में २४ तीर्थंकर हुये है जिनमें से अन्तिम भगवान महावीर का धर्म-शासन अभी चल रहा है। भगवान महावीर से २५० वर्ष पूर्व २३ वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ हुये। उन्हें सभी विद्वान ऐतिहासिक व्यक्ति मानते हैं। उनका नाम और प्रभाव सबसे अधिक प्रसिद्ध है।

उनके मन्दिर,मूर्तियां. स्तुति, स्तोत्र, स्तवन, आदि इतने अधिक हैं कि अन्य किसी भी तीर्थंकर के उतने नहीं है। पार्श्वनाथ के नाम से अनेको तीर्थ हैं, अनेक मदिरो के स्थानो के नाम - गर्भित स्तवन मिलते हैं, १०८ गुण विशेष नाम के स्तोत्र भी पाये जाते है। मत्र, यत्र भी सबसे अधिक पार्श्वनाथजी के नाम - गर्भित मिलते हैं अर्थात एक चमत्कारी सर्वदुःख एवं अनिष्ट के निवारक समस्त मनोवाछित के प्रदाता के रूप मे पार्श्वनाथ और उनके मंत्र आदि की प्रसिद्धि है।

भ० पार्श्वनाथ संबंधी स्तोत्र,स्तवन,प्राकृत,सस्कृत,अपभ्रंश,हिन्दी, राजस्थानी. गुजराती, आदि भाषाओ मे हजारो की संख्या मे प्राप्त है उनमे से कुछ का संग्रह पार्श्वादर्श आदि ग्रन्थो मे प्रकाशित हो चुका है। उपलब्ध पार्श्वनाथ सम्बंधी समस्त स्तोत्रो मे उवसग्गहर स्तोत्र सबसे प्रचीन है। इसके रचयिता चतुर्दश पूर्वधर आचार्य भद्रबाहु माने जाते हैं। इस स्तोत्र का प्रारम्भ 'उवसग्गहर पास' पद से होता है इसीलिये इसका नाम उवसग्गहर स्तोत्र पड़ गया। उवसग्ग या उपसर्ग का अर्थ है— विपत्ति, संकट, रोग उपद्रव अर्थात अमंगल और कष्ट-दायक प्रसंग उपसर्ग बतलाये जाते हैं और उन उपसर्गों को हरण करने वाले पार्श्वनाथ की स्तवना रूप यह स्तोत्र होने से इसका प्रचार भी खूब रहा। प्रातः और सन्ध्या तथा मध्यान्ह मे देव-वन्दन चैत्य - वंदन किये जाते है उन मे भी इस स्तोत्र का पाठ होता है। सप्त-स्मरण और नव-स्मरण मे भी इसे एक स्मरणीय स्तोत्र के रूप मे स्थान दिया गया है।

इस स्तोत्र के निर्माण प्रसंग का जो विवरण 'प्रबन्ध कोश आदि' ग्रन्थो मे मिलता है उसके अनुसार प्रतिष्ठानपुर (पैठण) के भद्रबाहु और वराहमिहिर दो ब्राह्मण भाई थे जैनाचार्य यशोभद्र सूरि के पास

से वे जैन साधु के रूप में वे दीक्षित हुये। उनमें से आचार्य भद्रबाहु तो पट्टधर, युग प्रधान चउदह पूर्वी एवं दस निर्युक्तियों व भद्रबाहु संहिता के प्रणेता बतलाये गये हैं। वराहमिहर को ज्योतिष का वरिष्ठ विद्वान कहा गया है। वह मर कर व्यंतर हुआ और श्रावकों को उपद्रव करने लगा। घर-घर में रोग फैल गये तब दुःखी होकर श्रावकों ने आचार्य भद्रबाहु से उपसर्ग निवारण की प्रार्थना की और उन्होंने पूर्व में से उद्धृत करके पांच गाथा वाले इस उवसग्गहर स्तोत्र की रचना की। इसके पाठ से सबका संकट टल गया। इसलिये कष्टों के निवारणार्थ इस अचिंत्य चिंतामणि स्तोत्र का पाठ आज भी किया जाता है।

प्रबन्धकोष का उद्धरण

पूर्वेभ्य· उद्धृत्य 'उवसग्गहर पासम्' इत्यादि स्तवन गाथा पचकमय सन्ददृर्भे गुरुभिः, पाठित च तल्लोके। सध. शान्तिं गतः क्लेशः। अद्यापि कष्टापहारार्थिभिस्तत्पठथमानमास्ते। अचिन्त्य-चिन्तामणि प्रतिमं च तत्।"

जिनसूर मुनि रचित उपसर्ग स्तोत्र प्रभाव गर्भित प्रियंकर नृप कथा के प्रारम्भ में इस स्तोत्र के सम्बन्ध में लिखा है—

उपसर्गहर स्तोत्रं, कृतं श्रीभद्रबाहुना।
ज्ञानादित्येन संघस्य, शान्तये मगलाय च ॥ ३ ॥
एतत्स्तवप्रभावो हि, वक्तुं केनापि शक्यते ?
गुरूणा हरिणा वा वाक् प्रह्वयाऽप्येक जिह्वया ॥४॥
उपसर्गहरस्तोत्रे, स्मृते स्युः शुभसम्पदः।
संयोगसन्ततिनित्य स्युः समीहितसिद्धयः ॥ ५ ॥

उदयो[1]च्चपदो[2] पाया[3], उत्तमत्व[4]मुदारता[5]।
उकारा पच पु्ंस. स्यु–रुपसर्गहरस्मृते ॥ ६ ॥
पुण्य[1]पापक्षय[2]प्रीति[3]पद्मा[4]च प्रभुता[5]तथा ।
पकारा पच पुँसा स्यु, पार्श्वनाथस्य सस्मृतौ॥७॥
उपसर्गहर - स्तोत्र–मष्टोत्तरशत सदा ।
यो ध्यायति स्थिर स्वानतो, मौनवान् निश्चलासन. ॥८॥
तस्य मानवराजस्य, कार्य-सिद्धि पदे पदे ।
भवेच्च सतत लक्ष्मी-चचलाऽपि हि निश्चला ॥६॥
युग्मम् जलेऽनले नगे मार्गे, चौरे, वैरे ज्वरे गिरे
(ह्वरेऽम्वरे?) ।
भूते प्रेते स्मृत स्तोत्र, सर्वभय-निवारकम् ॥ १० ॥
शाकिन्यादिभय नास्ति,न च राज भय जने ।
पग्माम ध्यायमानेऽस्मि – न्नुपसर्गहरस्तवे ॥११॥
स्तवकर्तु राशीर्वचनमाह—
उवसग्गहर थोत्त, काऊण जेण संघकल्लाणम् ।
करुणायरेण विहिय, स भद्दवाहू गुरू जयउ ॥१२॥
प्रत्यक्षा यत्र नो देवा,न मन्त्रा न च सिद्धयः ।
उपसर्गहरस्यास्य, प्रभावो दृश्यते कलौ ॥१३॥
प्राप्नोत्यपुत्र सुतमर्थहीन.,श्रीदायते प्रतिरपीशतीह ।
दु खी सुखी चाथ भवेन्न कि कि, त्वद्रूपचिन्तामणि
चिन्तनेन? ॥१४॥
एकया गाथयाऽप्यस्य, स्तवस्य स्मृतमात्रया ।
शान्ति स्यात् कि पुन पूर्ण,पचगाथाप्रमाणकम्? ॥१५॥
उपसर्गा. क्षय यान्ति च्छिद्यन्ते विघ्नवल्लय
मन. प्रसन्नतामेति-ध्यातेऽस्मिन् स्तवपु गवे ॥१६॥

रचना काल

आचार्य भद्रबाहु और वराहमिहिर ज्योतिषी को सगे भाई के रूप में उल्लिखित करना कहा तक ठीक है, नही कहा जा सकता पर वराहमिहर एक प्रसिद्ध ज्योतिषी छठी शताब्दी में हो गये है। अतः उसके भाई भद्रबाहु चवदहपूर्वधर और निर्युक्तिकार भद्रबाहु नही हो सकते। वराहमिहर के व्यंतर होकर उपद्रव करने और उस उपद्रव को शान्त करने के लिये इस स्तोत्र के निर्माण करने का उल्लेख इसे वराहमिहर के समकालीन भद्रबाहु की रचना सिद्ध करता है।

गाथाएं

इस स्तोत्र को प्रबन्ध कोष के अनुसार पांच गाथाएं ही थी और सभी टीकाएं भी इन पांच गाथाओ पर ही है। पर जिनसूर की प्रियंकर कथा में इसको छटी गाथा संबंधी प्रवाद इन शब्दों में किया है—

" प्राक्स्तवे षष्ठी गाथाऽभूत्। तत्स्मरणेन तत्क्षणात् धरणेन्द्रः प्रत्यक्ष एवागत्य कष्ट निवारितवान्। ततस्तेन धरणेन्द्रेण श्रीपूज्याग्रे प्रोक्तम्— पुनः पुनरत्रागमनेनाह स्थाने स्थातु न शक्तोऽस्मि। इति (तः?) तेन षष्ठी गाथा कोशे स्थाप्या। पचभिर्गाथाभिरपि अत्रस्थस्तत्स्तवं ध्यायता सता सान्निध्यं करिष्यामि। तदनु पचगाथाप्रमाणं स्तवन पठ्यते। आद्यगाथयोपसर्गोपद्रवविषहर—विषनिवृति स्यात् ॥ १ ॥"

अर्थात्-पहले इस स्तोत्र की ६ गाथाएं थी उसके स्मरण करने के साथ-साथ धरणेन्द्र प्रत्यक्ष होकर कष्ट निवारण करता था।

लोग साधारण सी बात पर स्मरण कर धरणेन्द्र को बुला लेते इससे परेशान हो कर धरणेन्द्र ने पूज्यश्री से कहा। तब आचार्यश्री ने छटी गाथा भंडार कर दी। पांच गाथा के स्मरण करने वाले को भी मै वहां रहता हुआ सानिध्य करूंगा — धरणेन्द्र ने कहा। तब से पांच गाथा का ही पाठ किया जाने लगा इस प्रवाद की चर्चा कल्पसूत्र की टीकाओं आदि मे भी पाई जाती है।

चिन्तामणि कल्प विधि मे इस स्तोत्र की ७ गाथाओ का उल्लेख भी मिलता है। यथा—

" तदनन्तर वलय कारेण ॐ पूर्वकेण स्वाहा पर्यन्तन उपसग्गहर पासमित्यादि गाथा ७ श्लोकानि स्तोत्रेण वेष्टयेत्।"

मुनि न्यायविजयजी ने 'जैनाचार्यो' ग्रन्थ में यह स्तोत्र ७ गाथा का बनाया लिखा है वैसे २० गाथा का भी यह स्तोत्र पाया जाता है और ४ गाथायें अन्य भी पाई जाती हैं। जो देवचन्द्र लालभाई जैन पुस्तकोद्धार सस्था से प्रकाशित प्रियंकर नृप कथा के परिशिष्ट 'ग' मे प्रकाशित हो चुकी है।

पाद पूर्ति उद्धरण

उसके बाद उपसर्गहर स्तोत्र पाद पूर्ति रूप पार्श्वस्तोत्र तेज सागर गणि रचित २१ पद्यो का छपा है। इस से प्राचीन उवसग्गहर स्तोत्र जिनप्रभसूरि का हमारे पास है जो भूमिका के अन्त में दिया जा रहा है।

टीकाएं

इस स्तोत्र पर अनेकों टीकायें प्राप्त है। जिनमें से चन्दसेन क्षमा श्रमण की टीका या बृहद् चक्रविधि सबसे प्राचीन जान पड़ती है। पर उसका श्रीचन्द्राचार्य कृत लघुवृति में उल्लेख ही हुआ है यह महान् पूर्ण टीका पूर्ण रूप में प्राप्त नहीं है। इस लघुवृति में बृहद्वृत्ति और विद्या-प्रवाद ग्रन्थ का भी उल्लेख है पर यह दोनों भी अप्राप्त हैं। चन्दसेन क्षमाश्रमण की रचना मिलने और उनका निश्चित समय ज्ञात होने पर ही यह कहा जा सकता है कि उन की मंत्र-तंत्र गर्भित टीका कितनी प्राचीन थी।

उपलब्ध टीकाओं में द्विज पार्श्वदेव विरचित वृत्ति प्रियंकर नृप कथा के साथ छप चुकी है। प्रियंकर नृप कथा इस स्तोत्र के प्रभाव को व्यक्त करने के लिये ही रची गई है। इसलिये इसे भी उपसग्गहर स्तोत्र लघुवृत्ति के नाम से उल्लिखित किया गया है। श्रीचन्द्राचार्य रचित लघुवृत्ति जैन स्तोत्र संदोह प्रथम भाग परिशिष्ट 'ग' में छप चुकी है। जिनप्रभसूरि कृत अर्थकल्पलतावृत्ति और हर्ष कीर्ति सूरि एवं सिद्धि चन्द्र कृत व्याख्या अनेकार्थ रत्नमंजूषा के अन्त में छप चुकी हैं। इनमें से जिनप्रभसूरि की टीका १३६५ के पोस वदी एक को साकेतपुर में रची गई। इस टीका का परिमाण २७१ श्लोकों का है। सातवीं टीका समयसुन्दरगणि रचित सप्त स्मरण वृत्ति में प्रकाशित हो चुकी है। आठवीं अजित प्रभसूरि कृत अवचूरि अन्य सात टीकाओं के साथ जैन साहित्य विकास मंडल से प्रकाशित होने वाली है।

जिनरत्नकोश में इनके अतिरिक्त जयसागर गणि की टीका ८५०

श्लोक परिमित लघुवृत्ति एवं पूर्णचन्द्राचार्य की टीका का उल्लेख है। पर पूर्ण न्द्राचार्य और श्रीचन्द्राचार्य की टीका एक ही प्रतीत होती है। प्रो हीरालाल कापडिया ने प्रियंकर नृप कथा की प्रस्तावना मे जो पूर्णचन्द्रसूरि की टीका का विवरण दिया है वह श्रीचन्द्रसूरि की टीका मे भी पाया जाता है।

उपलब्ध टीकाओ में द्विज पार्श्वदेव की टीका सबसे प्राचीन मानून देती है। क्योकि पार्श्वदेव की पद्मावनी अष्टक वृत्ति संवत १२०३ की रचना है। मन्त्र, यंत्र, आम्नाय सबंधी टीका श्रीचन्द्र या पूर्णचन्द्र की सबसे महत्त्वपूर्ण लगती है। संस्कृत टीकाओ के अतिरिक्त सप्त-स्मरण, नव स्मरण के कई टब्बे प्राप्त होते हैं उनमे उपसर्गहर स्तोत्र की भाषाटीका भी प्राप्त है ही। हमारे संग्रह में खरतर-गच्छीय उपाध्याय साधुकीर्ति रचित सप्त-स्मरण वालावबोध की हस्त-लिखित प्रतियां है। इसकी रचना सं० १६११ दिवाली के दिन बीकानेर के मंत्री संग्राम सिंह के आग्रह से की गई। इसी तरह १८ वीं शताब्दी के तत्त्वज्ञ श्रीमद् देवचन्द्र जी रचित सप्त-स्मरण टब्बा भी हमारे अव-लोकन में आया था। इन दोनो भाषाटीकाओं मे उपसर्ग स्तोत्र सम्मिलित है ही। इनके अतिरिक्त महाराज गणि शिष्य महोपाध्याय पुण्य - सागर, के सं० १६४५ में जैसलमेर में वालावबोध की रचना की है। यह प्रति डुगरजी भडार जैसलमेर मे ५ पत्रों की प्राप्त है तथा धर्मसुन्दर शिष्य दान विजय ने भी इस स्तोत्र पर वालावबोध की रचना की है। इसकी१६८३मे लिखित प्रति मानमलजी कोठारी वीकानेर के संग्रह मे उपलब्ध है तथा इसकी एक और प्रति मुनि कांति-सागरजी के संग्रह में है।

उपरोक्त टीकाओ के अतिरिक्त मुझे उवसग्गहर स्तोत्र और

कल्प भी प्राप्त हुआ जिसकी प्रतिलिपि मैंने अपने ग्रन्थालय के लिये रखी है। इस कल्प में मंत्र और यंत्रों का अच्छा समावेश है। पाच यंत्र बने हुये हैं पर इस की दूसरो शुद्ध प्रति मिलनी आवश्यक है। उपसग्गहर स्तोत्र का एक यंत्र पंडित भगवानदास जी प्रकाशित 'आदर्श जैन दर्शन' चौवीसी में भी प्रकाशित हुआ है। अन्यत्र भी प्रकाशित हुये सुने है। इस स्तोत्र संबंधी समग्र सामग्री को एक स्वतन्त्र ग्रन्थ रूप में जैन साहित्य विकास मंडल प्रकाशित करने वाला है।

मुनि प्रकाशविजयजी ने उवसग्गहर स्तोत्र। माहात्म्य विधि और कथा' नामक ग्रन्थ हिन्दी भाषा में तैयार करके अवश्य ही हिन्दी भाषी जैन-जनता के लिये बहुत लाभ एवं उपकार का कार्य किया है। इसमें भी दो यंत्र दिये गये है। प्रियंकर नृप कथा भी दे दी गई है। श्रद्धालु व्यक्तियों के लिये यह ग्रन्थ काफी उपयोगो सिद्ध होगा। इसमें मैंने अपने संग्रह के उवसग्गहर कल्प का भी समावेश कर दिया है। साथ ही प्रियंकर नृप कथा के परिशिष्ट में प्रकाशित २० गाथा वाला स्तोत्र व टिप्पणी की ४ गाथायें भी दी जा रही हैं। हमारे संग्रह की एक हस्तलिखित प्रति में यह स्तोत्र १३ गाथाओं में लाल-स्याही से लिखा हुआ है इसका समावेश २० गाथा वाले स्तोत्र में हो जाता है उसकी भी नकल कराके मैंने उसमें सम्मिलित कर दी है। आशा है इस विशिष्ट और चमत्कारी स्तोत्र संबंधी सामग्री से जैन-जनता समुचित लाभ उठायेगी।

---0---

उवसग्गहर स्तोत्रस्य समग्र पाद पूर्ति रूपं

पार्श्व जिन स्तोत्रम्

पणमिय सुरनरपूइया, पय कमलं पुरिस पुंडरीय पासं ।
संथ वण भत्ति चलणो, भणामि भव भमण भीम भणो ॥१॥

उवसग्ग हरं पासं, पणमय नट्ठट्ठकम्म दढ पासं ।
रोस रिउ भेय पासं, विणीहिय-लच्छी तणय वासं ॥२॥

जं जाणइ ते लुक्कं, पासं वंदामि कम्मघणमुक्कं ।
जो झाडऊण सुक्कं, झाणं पत्तो सिव मलुक्कं ॥३॥

विसहर विस निन्नासं, रोसग इदाइ मय कय विमाण ।
मेरू गिरि मन्निकासं, पूरिअ आसं नमह पासं ॥४॥

मरगय मणि तणु भासं, मंगल कल्लाण आवासं ।
ढालिय भव संतावं, थुणिमो पासं गुणपयासं ॥५॥

विसहर फुलिंग मंत्तं, सच्चं निच्चं मणे धरिज्जं तं ।
कुणइ विसं उवसंतं, भवियाईय मुणह निब्भंतं ॥६॥

पयपणय देव दणुओ, कंठे धारेइ जो सया मणुओ ।
सो हवइ विमल तणुओ, नामक्खरमत भवि अणुओ ॥७॥

तस्स ग्गह रोग मारी, पराभवं न करेइ रिसमारी ।
जो तुह सुमरणकारी, संसारी पत्त भवपारी ॥८॥

तस्सइ सिज्झइ कामं, दुट्ठ जरा जंति उवसामं ।

संथुणइ जोय कामं, अभिरामं तुज्झ गुणगामं ॥९॥

चिट्ठउ दूरे मंतो, जो कायइ निच्चमेव एगंतो।
तुह नाम मसंभंतो, सो जाइ लच्छिऊछमइ मंतो ॥१०॥

न उसइ दुट्ठभोई, तुज्झ पणामो वि बहु फलो होइ।
तुह नामेण वि जोई, न हवइ न पराहवइ कोई ॥११॥

नर तिरिए सु वि जीवा, भमंति नरपय कायरा कीवा।
सामि जिण समय दीवा, जो हि तुह न नामिया गीवा ॥१२॥

रिद्धि आहेवच्चं, पावंति न दुक्खदोगच्चं।
जे तुह आणा सच्चं, पालती भावओ निच्चं ॥१३॥

तुह सम्मत्ते लद्धे, जीवेणं हवइ सासए सिद्धे।
अणुवमतेय समिद्धे, अणंत सुहनाण संवद्धे ॥१४॥

तुह सुरनरवरमाहिए, चिन्तामणि कप्पपाय वब्भेहिए।
पयकमले मल-रहिए, मइ वसलोव सउं मह सुहिए ॥१५॥

पावंति अविग्घेणं, जीवा जइ दुट्ठ दोस वग्गेण।
न मडिज्जतिय सिग्घेणं, भव-पारं विहित विग्घेणं ॥१६॥

सासय - सुक्ख - निहाणं, जीवा अयरामरं ठाणं।
लब्भंति तुह पयाणं, जेसिं वट्टइ मणे झाणं ॥१७॥

इअ संथुओ महायस्स, कित्तिं दित्तिं धियं च मह पयासं।
वयणस्स विजिय पास, निन्नासिय दूरिय हय अयस ॥१८॥

कलिमल - भय - रहिएणं, भत्तिब्भर निब्भरेण हियएणं।
थुणिओ हिय - सहिएणं, मए तुमं कम्मविहिएणं ॥१९॥

ता देव ! दिज्झ बोहिं ठवेमि जं मायचंमि तुह गेह।
कय पावस्सय सोहिं, कुणसु भवारण भवणोहि ॥२०॥

अवगेय पवयण निच्चंद, भवे भवे पास जिणचंद ।
तुह पय पंकय मयरंद, भव भसलत्तं भवउ महा वंद ।।२१।।

सिरि मद्द वाहु रइयस्स, जिण पहसूरि हि मं सपहावं ।
संथवणस्स समग्गस्स, विहिय विवुहाणय पयस्स ।।२२।।

इति श्री उपसर्गहरस्य स्तवन संपूर्ण ।।

महान् स्तोत्र की आराधना सम्बन्धी कुछ विशेषता

यंत्र मंत्रादि की विधि गुरुजन की कृपा से ही पूर्णतया प्राप्त होती है। तथापि संक्षिप्त विधि जान लेना आवश्यक है। मंत्र साधक की उच्च भूमिका को प्राप्त करने के लिये योग, उपदेश, इष्ट साध्य, सकलीकरण, पंचोपचार, पूजा, दिशा, काल, मुद्रा, पल्लव आदि का भेद परिज्ञान जानना आवश्यक होता है। परन्तु ये बातें गम्भीर हैं, गुरुमुख से ही जानना उचित है। यहां तो मात्र सामान्य विधि का ही वर्णन कर रहे हैं।

१. प्रथम गुरुजी के पास जाकर वन्दनादि पूर्वक श्री उवसग्गहर स्तोत्र का पाठ शुद्धोच्चारण पूर्वक सीखना और उनसे विधि ग्रहण करना।

२. पूजा पाठ या स्तोत्र के योग्य शुद्ध सामग्री एकट्ठी करना।

३. मंगल मुहूर्त तथा शुभ दिवस में विधि प्रारम्भ करनी।

४. प्रारम्भ में कोई न कोई तप अवश्यमेव करना चाहिये यदि शक्ति हो तो जब तक (५०००) पांच हजार जाप समाप्त न हो तब तक उपवास की तपस्या करनी चाहिये। शक्ति के अभाव में आयंबिल की तपस्या करनी अथवा एकासना की जघन्य तपस्या भी की जा सकती है। प्रारम्भ में कम-से-कम तेला—तीन आंयबिल तो

करने चाहिये।

५. तदनन्तर उवसग्गहर स्तोत्र के यंत्र को रजत ताम्र भोज पत्र वस्त्र या कागज पर छपे हुए यंत्र को शुद्ध भूमि भाग में नाभि से उंची चौकी आदि पर तीन नवकार गिनकर स्थापित करे। चौकी पर उत्तम लाल या स्वेत वस्त्र बिछाना चाहिये। इसके बाद आत्म रक्षा के लिए वज्रपंजर स्तोत्र बोलना चाहिये। इसके बाद अंग कर न्यास की विधि आती हो तो करना और आह्वान स्थापनादि पचोपचार करना। यंत्र की अष्ठ प्रकारी पूजा करना। चन्दपूजा के अतिरिक्त पूजाएं करना। पूजा के पूर्व सात नवकार का जाप कर प्रभु पार्श्वनाथ की मूर्ति या फोटो की स्थापना करना चाहिये। चन्दन पूजा के स्थान पर वासक्षेप से भी पूजा कर सकते हैं। पूजा के पश्चात् एकाग्र-चित्त से प्रशमरस-निमग्न होकर उवसग्गहर स्तोत्र का पाठ शुद्धोच्चारण पूर्वक करना। स्तोत्र का जाप करते समय दृष्टि इधर उधर न करे प्रभु के सन्मुख या अपनी नासिका के अग्रभाग पर रखे।

श्रेष्ठ ध्यान करने कि विधि यह है कि दात परस्पर न हों होठ न चले जिह्वा भी न हिले। ध्यान अंगुली के पर्वो से या माला से दोनो प्रकार से हो सकता है माला साधारणतया सफेद या पीले रंग की होनी चाहिये। वैसे विशेष इष्ट कारणो के लिए भिन्न २ वर्ण को मालाए होती हैं। जाप करते हुए माला वाला हाथ नाभि से उपर रहना योग्य है एवं वह हाथ वस्त्रादि से न छुए। एक माला पूरी होने पर सुमेरु का उलंघन न करे नमस्कार कर हाथ जोड़े तथा माला घुमाकर दूसरी तरफ से माला फेरना शुरु करे। माला पूरी होने पर प्रभु का ध्यान करना अधिष्ठायक देव का स्मरण नमस्कार पूर्वक "सर्व मंगल मांगल्य" आदि बोलकर जाप पूरा करना।

१. जाप करते समय धूप या दीपक जलता रहे तो श्रेष्ट है।

२. मिथ्यात्वी अशुद्ध आहारादि का सेवण करने वालों को इस स्तोत्र का जाप करना उचित नही।

यन्त्रों की समझ

१. कर्म निर्जरा सम्बन्धी सामने रखना

२. अन्य के सम्बन्धी शान्ति के लिये सामने रखना

६. व्यापार सम्बन्धी सामने रखना

५. भूत प्रेत आदि सम्बन्ध में सामने रखना

५. ग्रहदिशादि के सम्बन्ध में सामने रखना

४. बिमारी के विषय में सामने रखना

३. संकट के समय सामने रखना

विघ्न हरण मंगल करण, पार्श्वनाथ भगवान।
सदा संघ संकट हरे, सदा करे कल्याण॥

प्रकाश विजय

दिनांक २०२४ कार्तिक शुक्ला २
जैन उपाश्रय, पुराना बाजार,
लुध्याना (पंजाब)

ॐ अर्हन्

उवसग्गहर स्तोत्र

जैन समाज का शायद ही कोई व्यक्ति ऐसा होगा, जो इस स्तोत्र के प्रभाव और माहात्म्य से परिचित न हो। इतना जरूर कहना होगा कि इस स्तोत्र की विधिवत् आराधना करने वालो को आज भी यह अपना चमत्कार और प्रभाव दिखाता है। इस स्तोत्र के रचयिता और स्तोत्र रचना के कारण से सम्भव है वहुत से लोग परिचित न हो, अतः यहाँ उसका कुछ दिग्दर्शन करा देना आवश्यक है।

उपसग्गहर स्तोत्र के रचयिता

इस स्तोत्र के रचयिता श्रुतकेवली चतुर्दशपूर्वधर आचार्य श्री भद्र वाहु स्वामी थे।

उनकी जीवनी सक्षेप मे इस प्रकार है—

ये प्रतिष्ठानपुर नगर के निवासी थे। भद्रबाहुस्वामी दो भाई थे— वराहमिहिर और भद्रवाहु। एक बार इस नगर में युगप्रभावक जैनाचार्य श्री यशोभद्र स्वामो पधारे। उनके उपदेश से दोनों भाइयों को वैराग्य प्राप्त हुआ। दोनो ने आचार्य श्री से भागवती मुनि दीक्षा अगीकार की। भद्रवाहु स्वामी अत्यन्त विनीत और कुशाग्र बुद्धि थे। थोड़े ही वर्षो मे पारगत हो गए। शास्त्रो का रहस्यार्थ प्राप्त करके वे महान् गीतार्थ हुए। उनकी विद्वत्ता, विनम्रता और व्यवहारदक्षता

को देख कर आचार्य बहुत ही प्रसन्न हुए और भद्रबाहु स्वामी को एक दिन आचार्य पद से सुशोभित करके अपना उत्तराधिकारी घोषित किया सारे संघ में हर्ष की लहर फैल गई। परन्तु आचार्य श्री के इस शुभ कार्य को भद्रबाहु स्वामी का गुरुभ्राता वराहमिहिर न सह सका। वह अपने मन मे अपने गुरुदेव के इस कार्य को पक्षपात समझने लगा और इसे अपना मानभंग मान कर भद्रवाहु स्वामी के प्रति ईर्ष्या करने लगा। वराहमिहिर इस मानभग का बदला लेने की ताक में रहने लगा। बदला लेने का और कोई उपाय न देख कर उसने मुनिदीक्षा छोड दी और ज्योतिषविद्या मे पारगत हुआ। ज्योतिषविद्या के बल पर समाज में काफी प्रतिष्ठा प्राप्त की। ज्योतिषविद्या को ही उसने अपनी आजीविका साधन बनाया। अपनी विद्वत्ता का सिक्का जमाने के लिए उसने 'वराह सहिता' नामक एक ज्योतिष ग्रंथ लिखा।

एक दिन प्रतिष्ठानपुर नगर के राजा के एक पुत्र का जन्म हुआ। राजा ने उस पुत्र को जन्मकुण्डली बनाने के लिए वराहमिहिर को बुलाया। उसने राजकुमार की आयु १०० वर्ष की बताई। राजा के पुत्र-जन्म की खुशी में राज्य के बड़े-बड़े अधिकारी, धनाढ्य, साहूकार, पण्डित एव पौरजन राजा को आशीर्वाद एवं बधाई देने आए किन्तु जैन साधु किसी के पुत्र जन्म पर बधाई देने नही जाते, इस साधुमर्यादा के कारण आचार्य भद्रबाहु स्वामी राजा के यहाँ बधाई देने न गए। इस मौके से दुर्लभ उठा कर वराहमिहिर ने ईर्ष्यावश राजा के पास जाकर शिकायत की। कहने लगा—"राजन्! आपके यहाँ पुत्रजन्म हुआ। उसकी खुशी मे बधाई देने नगर की सारी जनता उमड़ पड़ी, लेकिन इन अभिमानी

अज्ञानी और पर सुख द्वेषी भद्रवाहु आदि जैनमुनियो को देखिये, ये लोग आशीर्वाद देने आये तक नही आपके राज्य मे रहते हुए इनमें इतना भी विवेक नही है।"

राजा को यह सुन कर जैनमुनियों के प्रति वहुत घृणा पैदा हुई। लेकिन भद्रवाहु स्वामी को इस वात का किसी तरह पता लग गया। उन्होने नगर के एक अग्रगण्य श्रावक से कहा— "देवानुप्रिय मुझे यह भलीभाति ज्ञात हो गया है कि राजा के पुत्र का जन्म हुआ है। परन्तु हम साधु है। हम जन्म और मरण को इतना महत्त्व नही देते, क्योकि जन्म के साथ मृत्यु लगी हुई है। अभी जो राजा के पुत्र हुआ है, उसका आयुष्य सिर्फ ७ दिन का ही है और सातवे दिन विल्ली के निमित्त से उसकी मृत्यु होगी।" यह मै अपने ज्योतिषज्ञान के वल पर जान सका हू। आप राजा जी से जाकर मेरी ओर से सूचित कर दे। अन्यथा, राजा वहकावे मे आकर कुछ अन्यथा न कर वैठे।"

अग्रगण्य श्रावक यह सुनते ही राजा के पास पहुंचा और आचार्य द्वारा सूचित वात एकान्त मे उनके सामने प्रकट की। राजा को सुनकर वड़ा आश्चर्य हुआ कि इस नगर के प्रसिद्ध ज्योतिषी वराहमिहिर ने तो मेरे पुत्र का आयुष्य १०० वर्ष का वताया और ये जैन-आचार्य सिर्फ ७ दिन का ही आयुष्य वताते हैं। इसमें क्या रहस्य है? जो हो, मुझे इसका उपाय कर ही लेना चाहिए। राजा ने अपने सेवको को आदेश देकर नगर में जितनी भी विल्लियाँ थी, उन्हे पकडवा कर नगर के वाहर निकलवा दी।

परन्तु होनहार वलवान होता है। भवितव्यता कभी

निष्फल नही जाती। राजपुत्र जब सात दिन का हुआ उस दिन उसकी धाय-माता दरवाजे के बीच मे बैठ कर उसे स्तनपान करा रही थी। अचानक उसी समय बिल्ली सरीखी आकृति वाली कपाट की अर्गला टूट कर बालक के सिर पर गिर पडी। इससे तत्काल बालक की मृत्यु होगई।

राजा ने जब यह सुना तो अत्यन्त शोक विह्वल हुआ और सोचने लगा "धन्य है जैनाचार्य को जिन्हो ने मुझे पहले से ही भावी घटना से सावधान कर दिया।" इस घटना से राजा की वराहमिहिर के प्रति अप्रीति और भद्रबाहु स्वामी के प्रति बहुमन पैदा हुआ। सारे नगर में प्रजाजनों की नजरों में वराहमिहिर गिर गए और भद्रबाहु स्वामी की प्रशसा होंने लगी। इसके अतिरिक्त अन्य दो तीन अवसरों पर भी वराहमिहिर का कथन झूठा साबित हुआ, जिससे मन ही मन वह खिन्न रहने लगा और भद्रबाहु स्वामी को नीचा दिखाने की फिकर में रहने लगा। मगर 'सांच को आच नही' इस कहावत के अनुसार वह उनका कुछ भी बिगाड़ न सका। फिर भी अपने जीवन को क्रोध और ईर्ष्या की आग में जलता रहता। अन्त-समय में दुष्ट परिणामों के कारण मर कर वह व्यतर योनि का देव हुआ। व्यन्तर योनि में प्राप्त विभंगज्ञान द्वारा उसने अपने पिछले भव में भद्रबाहु स्वामी के साथ वैर को जाना और उसी वैर का बदला लेने के लिए चतुर्विध श्री संघ मे भयकर महामारी रोग का उपद्रव फैलाया। इस भयकर रोग से श्री संघ में हाहाकार मच गया। श्री सघ ने इस अशान्ति के वातावरण से घबरा कर अपने परमोपकारी तारक गुरुदेव आचार्य श्री भद्रबाहु स्वामी के चरणों में प्रार्थना की—

"गुरु देव ! हमे इस अशान्ति से वचाइये।" आचार्य श्री ने सारो घटना सुन कर ज्ञान द्वारा पता लगा लिया कि यह उपसर्ग (उपद्रव) वराहमिहिर के द्वारा ही किया गया है। उन्होने श्री सघ को आश्वासन दिया और तभी इस उपद्रव से संघ की रक्षा करने हेतु 'उवसग्गहर स्तोत्र' प्राकृतभाषा मे वनाया। इस स्तोत्र की विधिपूर्वक साधना करने से शीघ्र ही वह भयंकर रोग निर्मुल होगया, सघ मे सर्वत्र शान्ति ही शान्ति फैल गई।

उसी दिन से इस 'उवसग्गहर स्तोत्र' का जैन समाज मे प्रचार-प्रसार हुआ। तभी से इसकी महिमा और चमत्कार अनेक श्रद्धाशील भक्त देख चुके है, अनुभव कर चुके है। 'हाथ कंगन को आरसी क्या ! आप भी इस स्तोत्र की विधिवत् आराधना करके इसे अजमा सकते है।

उवसग्गहर स्तोत्र के आराधक
राजा प्रियकर

अव हम एक ऐसे व्यक्ति की कथा आपको वता रहे है, जिसने इस उवसग्गहर स्तोत्र की सम्यक् आराधना या साधना की थी। वे थे राजा प्रियकर।

जम्बूद्वीप के अन्तर्गत भारतक्षेत्र में मगधदेश के अशोक पुर नामक विशाल नगर मे राजा अशोक चन्द्र राज्य करता था। एक समय पाटलीपुत्र के कुछ सुनार उसके राजदरबार मे आए। उन्होंने राजा को प्रणाम किया। राजा ने उन्हे वैठने का इशारा किया और परिचय पूछा तो उन्होंने कहा— "राजन् ! हम स्वर्णकलाकार है। हमे अपने ईष्टदेव का

वरदान है कि जैसे आभूषण तुम बनाओगे उन्हें पहनने वाला व्यक्ति भी उसी गुण से विभूषित हो जायगा। जैसे राज्ययोग्य आभूषण को पहनने से वह व्यक्ति राजा बन जायगा, धनिक योग्य आभूषण को पहनने वाला सामान्य व्यक्ति भी धनवान हो जायगा, सामान्य राजा उन आभूषणों को पहन कर महान् राजा बन जायगा। यह सुनकर राजा ने प्रसन्न होकर कहा—"तो, तुम सब उच्च कलाकार हो। तुम्हारी कला की कद्र की जायगी। पहले तुम एक कीमती हार बना लाओ, जिसमें सोने के सूत्र मे हीरे, पन्ने, माणिक्य और मोती सभी पिरोये हुए हों।" कलाकार बोले—"जी हाँ, हम आपका मनपसंद हार अवश्य बना देगें। आप हमे खजाने से ये सब साधन दिलवा दें।" राजा ने खज़ानची को बुलाकर आदेश दिया कि—इन कलाकारों को हीरा, पन्ना माणिक्य, मोती, सोना आदि जिन जिन चीजों को जितनी मात्रा मे जरूरत हो, खजाने से नाम लिख कर दे दो। कलाकार हार बनाने के लिए अभीष्ट वस्तुए पाकर बड़े ही प्रसन्न होकर विदा हुए। हार बनाने में उन्हों ने रात-दिन एक कर दिया, मानो अपनी सारी ही कला उस पर खर्च कर रहे हों। स्वर्ण कलाकारों ने लगातार ६ महीने लगाकर बड़े मनोयोग से वह हार तैयार किया और हार लेकर राजा के पास पहुँचे। राजा ने हार देखा तो बहुत ही खुश हुआ। अन्य जो भी राजसभा में बैठे थे सभी उस हार को टकटकी लगा कर देखने लगे राजा ने उस मनोज्ञ हार का नाम 'देववल्लभ' रखा। स्वर्ण कलाकारों को भी राजा ने मुंह मांगा दाम तथा रत्न आदि पारितोषिक दे कर विदा किया।

एक दिन शुभ मुहूर्त देखकर राजा उस बहुमुल्य हार को

पहिनने लगा कि उसी समय उसे जोर की छीक आ गई। राजा ने उस समय उस हार को पहनना ठीक न समझा और वापिस खजाने मे रखवा दिया। कुछ दिनो के वाद राजा को हार का स्मरण हुआ, उसने खजाँची से वह हार मगवाया, परन्तु ज्यो ही खजानची ने खजाना खोलकर देखा तो हार गायब ! वहुत तलाश करने पर भी जब हार नही मिला तो निराश हो कर खजानची ने राजा के पास जाकर निवेदन किया-- " राजन् ! हार वहुत ढू ढने पर भी मुझे नही मिला। मालूम होता है, किसी ने वह हार चुरा लिया है। " राजा को भी यह जानकर साश्चर्य खेद हुआ। राजा ने भी हार का पता लगवाने का बहुत प्रयत्न किया पर कही भी उसका अता पता न मिला। राजा ने नगर के ज्योतिषियो को बुला कर पूछा कि- " वह हार मिलेगा या नही? " ज्योतिषी भी हार के बारे मे कुछ न वता सके। इसी बीच " भूमिदेव नामक " एक नैमित्तिक घूमता घामता राज दरबार में आ पहुचा। राजा ने उसका यथोचित सत्कार कर के उससे खोये हुए हार के विषय में पूछा। नैमित्तिक ने कहा- " मैं आपके प्रश्न का उत्तर कल दू गा। " दूसरे दिन उस नैमित्तिक ने राजा से कहा- "राजन् कुछ वर्षो वाद आपको हार मिल जाएगा। लेकिन जिसके पास से हार मिलेगा वही आपकी राजगद्दी का उत्तराधिकारी होगा। यदि आज से तीसरे रोज आपका हाथी मर जाए तो समझ लेना कि यह बात सोलह आने सत्य है और देवता का कथन होने से यह असत्य नही हो सकता है। राजा यह बात सुन कर अत्यन्त ही चिन्ता मे पड गया। ठीक तीसरे ही दिन राजा का हाथी मर गया। फिर भी राजा को नेमितिक के कथन पर विश्वास न हुआ और दुःसाहस पूर्वक कहने लगा

'मरे हाथी के मरने का मेरे हार के चोर के राजगद्दी पर बेटने से क्या सम्बन्ध? ये नैमित्तक तो यों ही उटपटांग बकते है। मै ऐसा उपाय करूंगा,जिससे, 'अरिशूर, रणशूर और दानशूर' ये तीनों पुत्र ही मेरे राज्य के उत्तराधिकारी होगे। नैमित्तक का कथन झूठा हो जायगा।

पार्श्वदत्त को उवसग्गहर स्तोत्र का साक्षातकार

अशोकपुर नगर मैं पार्श्वदत्त नाम का एक धनिक व्यापारी भी रहता था अशुभ कर्मो के उदय से उसके व्यापार मे एकाएक घाटा लगा और वह दरिद्र हो गया। निर्धन की पूछ कही भी नही होती, चाहे वह कितना ही गुणवान क्यों न हो। उसकी पत्नी प्रियश्री उसे बहुत ही समझाने का प्रयत्न करती थी कि नाथ! आप चिन्ता न करे। ये दु;ख के दिन भी कट जायेंगे। "परन्तु उस स्वाभिमानी व्यापारी ने गरीबी के दिनो मे नगर मे रहना ठीक न समझ एक छोटे से गॉव मे रहने का निश्चय किया। एक दिन अपनी घर ग्रहस्थी का सब सामान लेकर पति पत्नी दोनों एक गांव मे जाकर बस गये और वहा संतोष-पूर्वक अपनी जिन्दगी बिताने लगे। एक दिन व्यापारी के पुत्र हुआ। पुत्र जन्म से व्यापारी दम्पती को प्रसन्नता हुई और आशा बन्धी कि अब शीघ्र ही निर्धनता से हम मुक्त हो जायेंगे लेकिन एक दूसरा दुख आ पड़ा। एक साल का होते ही वह लड़का एक साधारण बीमारी के कारण चल बसा। व्यापारी दम्पती धर्म परायण थे। पुत्र की मृत्यु के अन्तिम समय मे वे उसे नमस्कार महामंत्र सुनाते रहे। पुत्र वियोग के दुख को भूलने के लिए पति पत्नी दोनों वापिस उस नगर मे जाने का विचार करने लगे। पति की इच्छा कम थी। मगर पत्नी

के अत्यन्त आग्रह के कारण दोनो पुन. अशोकनगर मे जाने के लिए तैयार हो गए। परन्तु गॉव से रवाना होते ही अपशकुन हो जाने के कारण वे पुनः लौट आए और उसी गाव मे रहने लगे।

समय बीतते देर नही लगती। एक दिन प्रियश्री अपनी शय्या मे सुख से सोई हुई थी, उसी समय उसने एक सुन्दर स्वप्न देखा कि 'मुझे भूमि खोदते हुए एक निश्छिद्र मोती मिला।' इस श्रेष्ठ स्वप्न को देखते ही प्रियश्री अपने पति के पास गई और स्वप्न का सारा हाल सुनाया। पार्श्वदत्त ने सुनते ही प्रसन्न मुख द्रा से पत्नी से कहा "प्रिये! अब हमारे भाग्योदय के दिन आ पहुचे है। इस शुभ स्वप्नके फलस्वरूप तुम दीर्घ आयुष्य वाले स्वरूपवान महापुण्यशाली, सम्पूर्ण लक्षणो से युक्त एक पुत्र को जन्म दोगी। पति के मुख से स्वप्नफल सुन कर प्रियश्री बहुत ही हर्षित हुई और अपने गर्भ का समुचित रूप से पालन करने लगी पूर्ण समय होने पर उसने एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया। पुत्र जन्म के बाद पार्श्वदत्त की परिस्थिति मे दिनो दिन परिवर्तन होने लगा। सुखसमृद्धि के साधन बढने लगे। अब पति पत्नी दोनो ने अशोकनगर जाने का सोचा और एक दिन शुभ मुहूर्त मे प्रस्थान कर दिया। नगरके निकट एक आम के पेडके नीचे पति पत्नी दोनो विश्राम करने बैठे। आपस मे वार्तालाप करने लगे। सेठ बोला अब हम नगर मे जा रहे है। पर यह बताओ वहाँ किस वस्तु का व्यापार किया जाय? इतने मे ही यकायक आकाशवाणी हुई-"सेठ! तुम बिलकुल चिन्ता मत करो। तुम्हारा यह पुत्र बहुत ही भाग्यशाली होगा; यह दीर्घायुषी और करोडपति तो होगा ही, बाद मे अशोक पुर नगर का राजा भी बनेगा।

यह कथन सुनते ही सेठ सेठानी दोनो चौके और देखने लगे कि यह आवाज किस दिशा से आई है ? परन्तु वहाँ चारो ओर दृष्टि दौडाने पर भी बोलने वाला कोई भी दिखाई न दिया। अन्ततोगत्वा सेठ ने साहस पूर्वक कहा " अदृश्यरूप से यह कौन महानुभाव बोल रहे है, कृपा करके स्पष्ट वताने का कष्ट करे।" उसी क्षण फिर आकाशवाणी हुई-"मै और कोई नही, तुम्हारा ही पहला मृत पुत्र हूं। मेरी मृत्यु के समय आपने मुझे नमस्कार महामत्र सुनाया था। उसके पुण्यप्रभाव से मै व्यन्तरजाति का देव वना हू। आपके प्रति स्नेह के कारण मैं आया हू। इस मेरे बन्धु को जहाँ तक राज्यप्राप्ति नही होगी, वहाँ तक मै उस का सहायक रहूगा। मेरा नाम प्रियकर है । अत. इसका नाम भी प्रियंकर रखना। " किसी समय मेरे योग्य जरूरी कार्य हो तो इसी पेड के पास आकर धूप-दीप द्वारा मेरा पूजन कर के मुझे बुलाना। मैं प्रगट हो जाऊंगा। और आप की सहायता करूगा । यों कह कर देव अन्तर्धान हो गया। सेठ सेठानी दोनो ने अपने नवीन पुत्र के साथ अशोक नगर मे प्रवेश किया।

पार्श्वदत्त सेठ और प्रियश्री सेठानी दोनो प्रतिदिन प्रातःकाल जल्दी उठ कर नित्य कर्म से निवृत्त होकर प्रभु भक्ति, गुरुदर्शन आदि धार्मिक क्रियाएँ करते, नित्य नियम, त्याग, जप, तप व प्रत्याख्यान आदि भी करते थे। साथ ही दोनो नमस्कारमहामत्र सहित 'उवसग्गहर स्तोत्र' का जाप भी नियमित करने लगे। सेठ का व्यापार भी चमकने लगा। एक दिन सेठानी को अपने दूसरे मकान की जमीन खोदते समय धन से भरा हुआ घडा

(निधान) दिखाई दिया । सेठानी ने सोचा--"हमे यह पराया धन नही लेना चाहिए । यह सोच कर तुरन्त उस पर मिट्टी डाल दी और उस खड्डे को पाट दिया । वह शीघ्र ही अपने पति के पास आई और उन्हे सारा हाल सुनाया ।

सुनते ही जहा धन का घड़ा गडा हुआ था, वहा सेठ पार्श्वदत्त आया और उसे खोद कर बाहर निकाला । वृतधारी श्रावक होने की वजह से पार्श्वदत्त ने उसे स्वय ग्रहण करना उचित न समझा वह उस निधि को लेकर सीधे राजसभा मे पहुचा और राजा के समक्ष उसे रखा । राजा ने पूछा--यह क्या है ? क्यो लाये हो ? तब पार्श्वदत्त ने उस निधि के निकलने की सारी घटना आद्योपान्त सुनाई और कहा-मै व्रतधारी श्रावक हू,इस लिए दूसरे के स्वामित्व का धन नही ले सकता । इसी कारण मै इसे आपको सौंपने आया हू । राजा ने अपने मत्री और पुरोहित वर्ग को बुला कर पूछा शास्त्रीय दृष्टि से बताइये कि इस धन का वास्तविक अधिकारी कौन हो सकता है? सबने सोच विचार कर कहा--गडे हुए धन का वास्तविक स्वामी तो राजा ही होता है ।

अतः आपको ही इसे स्वीकार करना योग्य है । सेठ ने अपनी ईमानदारी का परिचय दिया, अतः इसमें से कुछ हिस्सा सेठ जी को देने पर वे इसे ग्रहण कर सकते है ।"

मन्त्री आदि की ओर से यह निर्णय सुन कर राजा ज्यो ही धन का घडा लेने के लिए अपना हाथ आगे बढाता है, त्यो ही अकस्मात् एक अव्यक्त मनुष्यवाणी हुई—'ठहर जाओ ! इस धन को मत छुओ । नही तो मै तुम्हे (राजा को)

पकड लूगा अथवा राजकुमार को खा जाऊगा, या तुम्हें अयुक्त परामर्श देने वाले मन्त्री और पुरोहित को पकड लूगा।" यह सुनते ही सभी डर के मारे कॉपने लगे—"राजन् ! आप इस धन को रहने दीजिए। मालूम होता है, यह धन किसी भूत, पिशाच या व्यन्तरदेव से अधिष्ठित है। अत यह धन आप इसी सेठ को ही सौप दीजिए।"

राजा ने पार्श्वदत्त से पूछा—"जिस समय आपको यह गड़ा हुआ धन मिला, उस समय आपके पास कोई था या नही ? सेठ—"राजन ! उस समय मेरे पास मेरी पत्नी के सिवाय और कोई नही था।"

राजा—"फिर यह धन आप मेरे पास क्यों ले आये ?"

पार्श्वदत्त–"महाराज ! इसके सिवाय और कोई चारा नही था क्योकि दूसरों की मालिकी का धन लेने का मेरे त्याग है तथा जिसका राज्य होता है, जमीन उसीकी मानी जाती है इसलिए जमीन मे से निकले हुए धन का मालिक राजा ही माना जाता है। इसी कारण मै इस गुप्तधन को आपके पास लाया हूं।"

राजा ने कहा—"मैं इस गुप्तधन पर से मेरा स्वामित्व हटा कर अब आपको सौपता हूं। अब तो इस पर आपका स्वामित्व होने से आप इसे खुशी से स्वीकार कीजिए।

सेठ ने राजा द्वारा प्रदत्त वह गुप्तधन ले लिया और अपने घर पर आया। सेठानी से सारा वृत्तान्त कहा।

सेठ-सेठानी दोनो को यह पक्का विश्वास होगया कि यह सब नमस्कार महामन्त्र और उवसग्गहरस्तोत्र का ही प्रभाव है। सेठ-सेठानी दोनों धर्माचरण विशेषरूप से करने लगे। अपना जीवन सादगी, सयम और न्याय की ओर मोड़ दिया। जिस भूमि मे यह निधि मिली थी, वही पर उन्होने नया महल बनवाया। व्यापार भी काफी बढ़ा लिया।

प्रियकर का विद्याध्ययन

पार्श्वदत्त का पुत्र प्रियकर धीरे-धीरे बडा होने लगा। जब वह विद्या पढ़ने योग्य हुआ तो उसे पाठशाला मे पढने के लिए भेजा गया। साथ ही धर्माचार्य के पास उसे धार्मिक ज्ञानाभ्यास भी करने लगे। कुछ ही वर्षो मे प्रियकर व्यावहारिक विद्याओ, कलाओ और धार्मिकज्ञान मे निष्णात होगया और उसने युवावस्था मे प्रवेश किया। नगर मे सर्वत्र उसके ज्ञान, विनय और विवेक की प्रशसा होने लगा।

प्रियकर द्वारा उवसग्गहरस्तोत्र ग्रहण

एक दिन जब प्रियकर धर्मगुरु के दर्शन करने गया तो गुरदेव ने प्रसन्न होकर उसे 'उवसग्गहर स्तोत्र' का पाठ तथा उसकी आराधना विधि बताई। साथ ही उन्हो ने इस स्तोत्र का महात्म्य बतलाते हुए कहा कि जो व्यक्ति प्रतिदिन इस स्तोत्र का ध्यान करता है विधिपूर्वक इसका जाप करता है या आराधना करता है, वह कभी रोग, शोक आदि किसी भी दुख से दुखी नही होता,उसे सब प्रकार की स्मृद्धि मिलती है,उसकी कीर्ति भी चारो

दिशा में फैल जाती है। तुम भव्यात्मा और पुण्यवान दिखते हो, तुम इसकी प्रतिदिन आराधना किया करो। " प्रियकर ने गुरु-देव के वचनो को शिरोधार्य किया और प्रतिज्ञा ली— " मै आज से जीवनपर्यन्त ' उवसग्गहर स्तोत्र ' की आराधना करूगा। जिस दिन इसका जाप करना (किसी कारण से) रह जाय, उस दिन मै सभी विगइयो (विकृतिकर पदार्थो) का त्याग करूगा। "

गुरुदेव से प्रतिज्ञा लेकर प्रियकर अब प्रतिदिन ' उवसग्ग-हर स्तोत्र ' का पाठ करने लगा। कुछ ही दिनों मे उस के यह स्तोत्र सिद्ध हो गया।

प्रियकर को अग्नि कसौटी

पढाई छोड कर अब प्रियंकर अपने पिता के साथ व्यापार मे लग गया था। एक दिन पिता ने उसे किसी दूसरे गाव ग्राहकों से रकम उधार वसूली(तकाजा)करने भेजा। वह ग्राहको से रकम वसूल करके अपने नगर को वापिस लौट रहा था कि रास्ते में कुछ भील मिल गये। वे प्रियंकर को जबर्दस्ती पकड कर अपने नायक के पास ले गये। भील नायक ने प्रियकर से कहा— " तुम हमारा एक काम करने का वचन दो तो तुम्हे छोड़ दिया जायगा, नही तो हम तुम्हे कैद मे डाल देगे और तुम्हे अनेक प्रकार की यातनाऐ देगे । "

प्रियंकर बोला— " क्या काम है ? कहिए तो सही ! अगर

मेरे योग्य और धर्मानुकूल होगा तो अवश्य करूंगा।

भील नायक—" देखो, काम यह है कि तुम्हारे नगर का राजा हमारा पक्का दुश्मन है हमे उसे व उसके सारे परिवार को पकडना है। इसके लिए तुम्हे अपने घर मे सात दिन तक हमे आश्रय देना होगा। तुम हमारे इस काम करने मे सहायता दोगे तो हम बाद मे तुम्हे बहुत सा धन देगे, तुम्हे सुखी कर देगे और बडा राज्याधिकारी भी बना देगे। प्रियकर दृढधर्मी था वह भीलनायक के प्रलोभनो और बंदरघुडकियो के आगे जरा भी न झुका। उसने सोचा— मैं धर्मात्मा पिता का पुत्र हू। धर्मगुरु से मैने धर्म पर दृढ रहने की बात सीखी है। मैं इस अधर्म मे कैसे शरीक हो सकता हूं। प्रियकर ने साफ इन्कार करते हुए कहा—"आप मुझे चाहे जो यातनाए दे सकते है, मुझे मौत के मुह मे डाल सकते है, परन्तु मैं इस अधर्म अन्याय और अत्याचार के कार्य मे कदापि सहयोगी नही बनूगा।' भीलनायक प्रियकर के इस साहस भरे और अपने अभिमान पर करारी चोट लगाने वाले वचन सुन कर एक दम क्रुद्ध हुआ और अपने सेवको को आदेश दिया— "यह यो ही थोड़े ही मानेगा ? लातो के देव बातो से नही मानते! जाओ इस के हाथो मे हथकडियां और पेरो मे बेडियाँ डाल कर जेलखाने मे डाल दो।" भीलनायक के आदेशवाहक प्रियकर को हथकडियाँ बेडिया डालकर जेलखाने मे ले गए। वहा पर उस पर सरक पहरेदारी भी लगा दी। परन्तु प्रियकर के मन मे देवगुरु और धर्म पर दृढ श्रद्धा थी। उसे पक्का विश्वास था कि मेरे पूर्व कर्मो के कारण यह सकट आया है, परन्तु 'उवसग्गहर स्तोत्र' की आराधना

मैं राज करता हूं। संकट के समय मुझे गुरुदेव ने विशेष-रूप से जाप करने का कहा था। अत. प्रियकर ने उवसग्गहर स्तोत्र का विशेष जाप करना शुरु किया। एकाग्रचित्त हो १२५०० जाप पूरे किये।

माता पिता को चिन्ता और देव का आश्वासन

इधर प्रियंकर समय पर घर नही लौटा तो माता-पिता को बड़ी चिन्ता हुई। पार्श्वदत्त सेठ ने प्रियकर की चारों ओर तलाश करवाई, पर कही भी पता न लगा। इस से सेठ-सेठानी को बहुत आघात पहुंचा। दोनो सोचने लगे। " इकलौता पुत्र और वह भी नयनों का तारा ! भर जवानी में पहली वार कार्य वश बाहर गया था और यह हाल हुआ! अगर ऐसा पता होता तो हम उसे भेजते ही नही ! सेठ-सेठानी दोनों इस प्रकार चिन्ता मग्न हो रहे थे कि अचानक लोगों ने खबर दी कि आपके पुत्र को इस नगर के राजा के कट्टर शत्रु भील उसे पकड़ कर ले गये है। " यह वात सुनते ही सेठानी के दिल पर बड़ी चोट लगी. वह मूर्च्छित हो कर गिर पड़ी। उसी समय सेठ उस व्यन्तरदेव (पूर्वभव के पुत्र) के पूजन के लिए उसी आम्रवृक्ष के नीचे आया। सेठ ने धूपदीप आदि से पूजा करके देव का आह्वान किया। सेठ ने कहा– " देव ! तुमने तो कहा था कि मेरे पुत्र को इस नगर का राज्य मिलेगा, परन्तु राज्य तो दूर रहा. उसे तो कारावास मिला है। ऐसे असत्य वचन आप सरीखे देवो के मु ह से कैसे निकल सकते है।" देव ने उत्तर दिया—"अरे भाग्यशाली सेठ! चिन्ता मत करो यह सकट शीघ्र ही 'उवसग्गहर' स्तोत्र के प्रभाव

से दूर हो जाएगा और पाच ही दिनो मे वह तुम्हारे घर पर विवाहित हो कर सकुशल वापिस लोट आयेगा। स्तोत्र के प्रभाव से देव भी उसकी सेवा करेंगे। " यह सुन कर पार्श्वदत्त सेठ की चिन्ता कुछ कम हुई। वह हर्षित होकर घर लौटा और सेठानी को यह समाचार सुनाये तो उसकी भी मूर्च्छा दूर हो गई।

प्रियकर की वन्धन मुक्ति और विवाह

इधर प्रियकर ने उवसग्गहर स्तोत्र का जाप किया जिसके प्रभाव से भील नायक के हृदय मे विचार उठा— " अरे! मैंने बेचारे इस वनिये के लडके को व्यर्थ ही गिरफतार करवा रखा है? यह तो अपने धर्म पर दृढ है। इसे पकड़े रखने मे कोई लाभ नही है। इसे छोड ही देना चाहिए।' भीलनायक यह सोच ही रहा था, इसी वीच एक महान् ज्ञानी पुरुष वहा पधारे। उन्हो ने भीलनायक को उपदेश दिया। भीलनायक ने पूछा— " महात्मन्! आप ज्ञानी पुरुष है। अपने ज्ञान की कुछ वाते बता सकेंगे? "

ज्ञानी पुरुष बोले— मै सुख-दुख, जीवन–मरण, रोग-शोक-क्लेश आदि के त्रिकालवर्ती स्वरूप को जानता हू।

" तो महाराज! मुझे कृपा करके यह वतलाइए कि हमारे राज्य को छीनने वाले अशोकचन्द्र राजा की मृत्यु कव होगी? भीलनायक ने उत्सुकता पूर्वक पूछा।

ज्ञानी पुरुष ने उसे एकान्त मे समय वताया। भीलनायक

ने पूछा—" उसके बाद उसकी राजगद्दी पर कौन बैठेगा?

ज्ञानीपुरुष—" अशोकचन्द्र राजा के मरने के बाद उसके किसी पुत्र को राजगद्दी नही मिलेगी। राजगद्दी उसे ही मिलेगी, जिस (वणिक पुत्र को) तुम ने अपने यहाँ गिरफतार कर रखा है। देवता उसे राजगद्दी दिलाने मे सहायक होगे।'

भीलनायक—" महात्मन् क्यों गप्पे हाकते हो! क्या एक निर्धन बनिया कभी राजा वन सकता है ? ये बनिये का लड़का कैसे तलवार पकड़ेगा? "

ज्ञानी पुरुष—" तुम्हे इस बात पर विश्वास न हो तो लो एक वात और बताता हूं " तुम आज रुग्ण हो जाने से मूग का पानी पीओगे।" यदि मेरी यह बात सच निकले तो पहले वताई हुई वात पर भी विश्वास कर लेना।

भील नायक—" मै तो आज बिलकुल निरोग हूं। इस सभा मे वैठा हूं। आपकी बाते मुझे तो निराधार लगती है और मुझे लगता है, ये दोनों बाते झूठी साबित होगी। खैर, जो भी हो, यह तो बता दीजिए कि इस बनिए के लड़के को कब राजगद्दी मिलेगी ?

ज्ञानीपुरुष—" इसे माघ शुक्ला १५ को पुष्पामृत योग आने पर अवश्य राजगद्दी मिलेगी। इस मे शका को जरा भी अवकाश नही। "

भील नायक ने सोचा— यह ज्ञानीपुरुष असत्य कैसे कह

सकते है? क्योंकि ऐसा करने मे इनका कोई स्वार्थ नही।' उसने वणिक पुत्र प्रियकर को शीघ्र ही बन्धन मुक्त कर देने और राज सभा मे ले आने का आदेश दिया। तत्क्षण प्रियकर को बन्धन मुक्त करके राज सभा मे लाया गया। भील नायक ने उसका सुन्दर आभूषणों मे सत्कार किया। और सभा विसर्जित करके उसे अपने साथ महल मे ले गया।

भीलनायक अपने स्थान पर आकर स्नानादि से निवृत्त होकर ज्यो ही कपडे पहिनने लगा त्यो ही उसके मस्तिष्क मे तीव्र वेदना पैदा हुई। पीडा असह्य होने से भीलनायक ने एकान्त मे विश्राम स्थान मे जाकर शयन किया। भोजन का समय हुआ। सभी लोग भोजन करने के लिए एकत्रित हुए, परन्तु वहा भील नायक को न देख कर पूछताछ करते हुए विश्राम स्थान मे जहा वह सो रहा था वहा पहुचे। भील-नायक को भोजन के लिए चलने का बहुत आग्रह किया परन्तु तीव्र वेदना के कारण उठने की बिलकुल शक्ति न रह गई थी। उसके प्रियजन तत्काल कई वैद्यो को बुला लाए। परन्तु नाडी की जाच करने पर भी किसी वैद्य को असली रोग का पता न लगा। सभी ने जो सूझा वह उपचार किया और चले गए। शाम को पीडा कुछ कम हुई। तब वैद्य की सलाह के अनुसार थोडा सा मूग का पानी भीलनायक को पिलाया गया। उसे पीकर वह सो गया। प्रातःकाल शरीर स्वस्थ हुआ, शरीर मे कुछ स्फूर्ति आई। इस आकस्मिक घटना से भीलनायक को ज्ञानीपुरुष का कथन बिलकुल सत्य जचा। इससे ज्ञानीपुरुष द्वारा प्रियकर के बारे मे कही हुई भविष्यवाणी के सत्य होने मे कोई सदेह नही रह गया। भीलनायक ने निश्चय कर लिया कि प्रियकर

भविष्य मे राजा होगा अत अपनी पुत्री वसुमति का इसके साथ विवाह कर देना ठीक रहेगा। सुबह होते ही भील-नायक ने अपनी कन्या का विवाह प्रियकर के साथ कर दिया और कन्यादान में विपुल धन राशि देकर विदा किया साथ में अशोकपुर तक उसे पहुचाने के लिए अपने विश्वस्त पुरुषो को भेजा। वे प्रियकर को उसके माता-पिता के पास सकुशल पहुंचा कर लौटे। प्रियकर ने आते ही अपनी पत्नी सहित माता-पिता के चरणो में प्रणाम किया। माता-पिता को अत्यन्त प्रसन्नता हुई, उन्हों ने हार्दिक अर्शीवाद दिया। पार्श्वदत्त सेठ ने सोचा—"पुत्र बड़ा भाग्यशाली है।" धीरे-धीरे प्रियकर ने पिताजी का सारा व्यापार-धन्धा सम्भाल लिया और पिता से प्रार्थना की—"पिताजी! पुत्र का कर्त्तव्य हो जाता है, जब माता-पिता वृद्ध हो जाये तो उन्हे धर्म-ध्यान भजन आदि करने के लिए अवकाश दे। आपकी कृपा से मै अव व्यापार सभालने लायक हो गया हू। अतः आप अव अपना अधिकाश समय प्रभु-स्मरण, धर्म-ध्यान, समाज सेवा आदि मे ही लगाएँ। मुझे आप के अनुभवों की तो अपेक्षा रहेगी ही। आप समय-समय पर मुझे अपने अनुभवों से, उत्तम शिक्षा से लाभान्वित करते रहे।" पिता ने कहा—"बेटा! तेरे जैसा विनीत आज्ञाकारी पुत्र मिला है। अब हमें चिन्ता किस बात की? अब मैं अपना अधिकाँश समय समाजसेवा प्रभु-भक्ति, व जीवनसाधना मे ही बिताऊंगा। जब मेरी जरूरत पडेगी तो मै स्वयमेव तुम्हें अपने अनुभव प्रदान करता रहूगा!

— ०० —

२१

आश्चर्यजनक स्वप्न दर्शन

एक दिन प्रियकर रात को गहरी नींद मे सोया था। रात्रि के चौथे पहर मे उसने यकायक एक विचित्र स्वप्न देखा कि "उसने अपनी सभी आँते बाहर निकाल कर सारे अशोकपुर नगर को उन आतो से वेष्टित कर लिया और अपना शरीर जल रहा है, उसे वह पानी छीट कर शान्त करने जा रहा है।" इतने मे तो उस की आँखे खुल गई। देखा तो वहा कुछ नही था। जागृत होते ही प्रियकर ने नमस्कार महामत्र और उवसग्गहर स्तोत्र जपना शुरू कर दिया। सवेरा होते ही प्रियकर ने स्वप्न मे देखी हुई सारी घटना पिताको कह सुनाई। पिता ने सुन कर कहा—"बेटा! कोई चिन्ता मत करो तुम भाग्यशाली हो, तुम्हे खराव स्वप्न आ ही नही सकता। अतः हमारे परम-उपकारी विद्यागुरु श्री त्रिविक्रम उपाध्याय के पास जाओ और उनके सामने स्वप्न की घटना सुनाकर उनसे इसका फल पूछो। अन्य किसी के सामने इस स्वप्न का जिक्र करने की आवश्यकता नही।" प्रियकर सीधा उपाध्याय जी के यहाँ पहुचा। उपाध्याय जी घर पर नही थे। वह नगर के बाहर सरोवर पर स्नान करने गये है. यह जानकर प्रियकर भी शीघ्र उस सरोवर पर पहुचा। उपाध्याय जी ने देखते ही पहिचान लिया और पूछा—"बेटा प्रियकर! कहाँ से और किस प्रयोजन से आये हो?" प्रियकर ने उन्हे एक ओर ले जा कर स्वप्न की घटना कही। उपाध्यायजी स्वप्न-वृत्तान्त सुनकर चकित हो गए और मन ही मन सोचने लगे "जिसे ऐसा स्वप्न आता है वह अवश्य राजा बनता है।

पर यह तो सेठ का लडका है। राजा बनने के कोई आसार भी इस मे नही दिखते।" फिर भी उपाध्य।यजी ने प्रियकर से कुछ प्रश्न पूछे, जिनका उसने सतोषजनक उत्तर दिया। तत्पश्चात् उपाध्याय जी प्रियकर के साथ बातें करते हुए उसे अपने घर ले जा रहे थे। रास्ते मे सौभ।ग्यवती नारियो का समूह अक्षत कुँकुम एव नारियल आदि सामग्री थाल मे लेकर आता हुआ सामने मिला। नगर मे प्रवेश के समय 'लकडो की भारी' लेकर आते हुए एक आदमी मिला। फिर गन्ने के रस का भरा हुआ घडा लिये एक व्यक्ति मिला। इन तीनों उत्तम शकुनों को देख कर तो उप।ध्याय-जी को पक्का विश्वास हो गया कि प्रियकर को आज से आठवे रोज अवश्य ही राज्य प्राप्ति होगी। उपाध्यायजी के घर पहुंचते ही प्रियंकर ने उनसे स्वप्न-फल बताने की प्रार्थना की। उपाध्यायजो ने कहा—"वह तो बाद मे बताऊ गा, लेकिन पहले तुम मेरी पुत्री के साथ पाणिग्रहण (विवाह) करने का मुझे वचन दो।"

"गुरुदेव! इस विषय मे मै कुछ नही कह सकता। मै अपने पिता जी को भेजूंगा, आप इस विषय मे उनसे ही बात कर लें। प्रियकर ने शर्माते हुए कहा।

उपाध्यायजी-- 'अच्छा जाओ,तुम अपने पिताजी को भेज दो।' प्रियंकर घर गया। उसने पिता जी को सारा हाल सुनाया और उन्हे उपाध्यायजी के यहा भेजा अपने घरपर सेठके आते ही उपा-ध्यायजीने कुशलवृत्तान्त आदि पूछनेके बाद कहा-'सेठजी'मेरी पुत्री सोमवती विवाहके योग्य हो गई है'मैं उसका विवाह आपके सुपुत्र प्रियंकर के साथ करना चाहता हूं। आशा है; आप इस विषय

से अपनी स्वीकृति देकर मुझे सतुष्ट करेंगे। पार्श्वदत्त सेठ ने कहा उपाध्यायजी ' आप बडे है। मैं आपसे क्या कहूं' आपको मैं इस बारे मे निराश नही करू गा। आपकी मनोभावना पूर्ण करू गा।'

उसके वाद उपाध्यायजी ने पार्श्वदत्त सेटसे कहा-'आपके पुत्र को वहुत ही शुभ स्वप्न आया है। उस का फल यही है कि वह इस नगर का राजा वनेगा।"

पार्श्वदत्तसेठ वहुत ही प्रसन्न होकर घर लोटा। उसने अपनी पत्नी से सारा हाल कहा। वह् भी वहुत खुश हुई सेठने धूमधाम से अपने पुत्र प्रियकर का विवाह उपाध्यायजी की पुत्री के साथ किया। उपाध्यायजी ने कन्यादान मे विपुल द्रव्य तथा कीमती चीजे भेट दी।

प्रियंकर द्वारा यक्ष कष्ट निवारण

प्रियकर के पडोस मे ही धनदत्त नाम का एक श्रेष्ठी रहता था उसने एक लाख रुपये खर्च करके एक सुन्दर महल वनवाया था। उसकी वास्तु क्रिया शुभमुहूर्त मे की। वे उस मकान मे रहने लगे। रात को सभी गहरी नीद मे सोये हुए थे कि अचानक एक विचित्र घटना घटी। कोई अदृश्यशक्ति घर मे उत्पात मचाने लगी। इससे घर के सभी लोगो की नीद उड गई और वे डर के मारे भाग कर चौक मे आ खड़े हुए। फिर कुछ देर वाद जव शान्ति हो जाती तो लोग पुन. सोने के लिए महल के अन्दर जाते, लेकिन वह अदृश्य शक्ति उन्हे मार-मार कर

भगा देती। धनदत्त सेठ बहुत घबराया इस कष्ट के निवारण के लिए अनेको उपाय किये, पर सब व्यर्थ ! आखिर सभी निराश हो गए कि क्या किया जाए ! लाखों रुपये खर्च करके बनाया हुआ यह मकान आज तो श्मशान-सा हो रहा है। धनदत्त सेठ रातदिन चिन्तामग्न रहा करते। एक दिन प्रियकर ने धनदत्त-सेठ को उदासीन देख कर पूछा-"चाचाजी! आप तो अत्यन्त चिन्ता में डूबे हुए-से लगते है। आपको ऐसी क्या चिन्ता है ?" धनदत्त सेठ ने कहा-"बेटा! इस मकान मे जब से हमने प्रवेश किया है, तबसे लेकर आज तक कभी शान्ति नही रही। न मालूम कौन-सी अदृश्यशक्ति आकर उपद्रव मचाती है, किसी को सुखसे सोने नही देती। हमारी नीद हराम कर दी है इसने! बेटा! तुम बड़े भाग्यशाली हो, परोपकारी भी हो. तुम ही ऐसा कोई उपाय बतलाओ, जिससे हम इस दारुण कष्ट से मुक्त हो सके।" प्रियंकर का हृदय पडौसी सेठ की दुःखद घटना सुन कर करुणा से भर आया। मन ही मन सोचने लगा-"मेरा पडौसी दुःखी रहे और मै सुखचैन की बशी बजाऊं, यह मुझे शोभा नही देता। किसी भी तरह से मुझे इनके कष्ट को दूर करना चाहिए। प्रियंकर ने धनदत्त सेठ को आश्वासन देते हुए कहा-"चाचाजी ! आप घबराइये मत। मै यथाशक्ति आपका कष्ट दूर करने का प्रयत्न करूंगा। कुछ ही दिनो बाद मै इस कार्य को हाथ में लूंगा। मुझे इस कार्य मे ८ दिन लगेगे।' धनदत्त सेठ ने कहा-"बेटा! तुम जैसे होनहार युवक ही इस कार्य को कर सकते है। जैसे भी जल्दी हो इस कार्य को करो और जो कुछ भी खर्च हो, मै निःसंकोच दूगा।" प्रियंकरने सेठ की प्रार्थना स्वीकार कर नये भवन के बीच मे जो बड़ा हाल था, उसमे

एक वेदिका वनवा कर पार्श्वनाथ प्रभु की प्रतिमा स्थापित करवाई। उसके आगे धूप दीप आदि करके प्रति दिन नमस्कार महामन्त्र पूर्वक उवसग्गहर स्तोत्र का ५०० जप करना प्रारम्भ किया। इसी वीच उस मकान मे रहकर उपद्रव करने वाला व्यन्तर देव प्रियकर को उपसर्ग करने लगा। परन्तु प्रियकर अपने जप से किञ्चित् भी चलायमान नही हुआ। इसी तरह ८वे रोज जव जाप पूरा होने आया तव व्यन्तर देव प्रियकर के समक्ष प्रगट हुआ और कहने लगा—"प्रियकर मैं तुम्हारे उवसग्गहर स्तोत्र के अधिष्ठायक देव से पराजित हो गया हू, वरना मैं तुम्हे जिन्दा नही छोडता। अव तो मै यहा से जा रहा हू। मैंने तुम्हे वहुत कष्ट दिया, इसके लिए क्षमा चाहता हू। अव मैं फिर कभी यहाँ नही आऊगा, और न किसी को तकलीफ ही दूगा।" प्रियकर ने कहा-"तुम्हारा भला हो।" वस यक्ष तुरत वहा से चला गया। प्रियकर ने धनदत्त सेठ को खुशखवरी सुनाई—"चाचाजी! अव से आपके घर मे कभी किसी तरह का कष्ट न होगा। जो कष्ट देने वाला व्यन्तर देव था वह यहाँ से चला गया है। अव आप अपने परिवार सहित सुखपूर्वक इस घर मे निवास कीजिए।" धनदत्त सेठ ने प्रियकरे को हार्दिक अशीर्वाद देते हुए वहुत ही आभार माना धनदत्त सेठ ने सोचा—'मेरी पुत्री श्रीमती विवाह योग्य हो गई है ऐसा पुण्य-शाली योग्य वर और कहाँ ढूढने जाऊगा! इसी उपकारी प्रियकर के साथ ही मेरी पुत्री का पाणिग्रहण कर दू तो अच्छा रहेगा। धनदत्त सेठने अपनी पत्नी और पुत्रो से परामर्श करके शीघ्र ही प्रियकर के साथ अपनी पुत्री श्रीमती का विवाह धूमधाम से कर दिया। यक्षकष्ट-निवारण मे सफलता मिलने के कारण

प्रियंकर की नगर में सर्वत्र प्रशंसा होने लगी।

यक्षपीड़ित मन्त्रीपुत्री का कष्ट निवारण

यक्षकष्ट निवारण की बात फैलते-फैलते राज्य के महामन्त्री हितकर के कानों मे पड़ी। वह प्रियकर के निवास स्थान पर आया। प्रियकर ने महामन्त्री जी को आदरपूर्वक आसन पर बिठाया और कहने लगा-"महामंत्रीवर! आप जैसे महान् व्यक्ति का मेरे सरीखे गरीब के यहां पधारना हुआ। यह मेरा अहोभाग्य है! कृपा कर मेरे योग्य कोई सेवा कार्य हो तो कहने का कष्ट करें।" प्रियंकर का विनम्र व्यवहार देख कर महामंत्री विनम्रता पूर्वक कहने लगे—"महानुभाव! मैने आपके द्वारा किये गए परोपकारों का वर्णन सुना है। इससे मे भी एक महान् आशा से आपके पास आया हूं। आशा है, आप मुझे निराश नही करेंगे।"

प्रियंकर— "आप कहिये तो सही; क्या बात है? अगर मुझ से होने लायक बात हुई तो मै अवश्य करूंगा। फिर आप तो बुजुर्ग है, मेरे आदरणीय है। आपके कार्य में सहायता करना मेरा प्रथम कर्त्तव्य है।"

महामंत्री—"महानुभाव! अपने घर की हीं बात है। मेरी पुत्री एक दिन अपनी सखियों के साथ नगर के बाहर उद्यान मे क्रीड़ा करने गई थी। वहाँ से वापिस लौटते ही वह पागल सी बकने लगी। मालूम होता है, किसी भूत, प्रेत, व्यन्तर, डाकिनी, शाकिनी या यक्ष का प्रवेश हो गया है। मैने इस कष्ट के निवारण के लिए अनेकों उपाय किये; पर सभी व्यर्थ

हुए। आपके द्वारा धनदत्त सेठ का गृहकष्ट निवारण सुन कर मे वड़ी आशा से आया हू। आशा है, आप मुझे इस सकट से उवारेंगे, मुझे शान्ति प्रदान करेंगे।"

प्रियंकर ने महामंत्री की वात सुन कर उन्हे आश्वासन दिया —"आप चिन्ता न करीये। वात मेरी समझ मे आ गई है। मैं इस कष्ट के निवारण का भरसक प्रयत्न करूंगा।" प्रियंकर ने उसी समय पूजा को सामग्री मगवा कर उवसग्गहर स्तोत्र का जाप करना शुरु किया। ज्यो ज्यों जाप होता गया मत्रीपुत्री को आराम होना शुरु हो गया।

कपटी ब्राह्मण के चगुल से छुटकारा

इसी बीच एक दिन प्रियकर के यहाँ एक निर्धन ब्राह्मण अपनी रूपवती युवती पत्नी को साथ लेकर आया। उसने प्रियकर से कहा —"महानुभाव! मै परदेश से आया हू। मुझे यहाँ से सिहलद्वीप जाना है; क्योंकि मैंने सुना है कि सिहलद्वीप का राजा एक वड़ा यज्ञ कर रहा है। उस यज्ञ मे आशीर्वाद देने के लिए आने वाले ब्राह्मण को वह लाख रुपये का हाथी दान मे देगा। इस लिए मैं शीघ्रातिशीघ्र सिंहलद्वीप पहुचना चाहता हू इसी कारण मैं अपनी पत्नी को अपने साथ नही ले जाना चाहता क्योकि उसे साथ मे लेकर जाने से एक तो काफी विलम्ब होगा दूसरे, वहाँ-शायद मुझे अधिक दिन रुकना पडे तो इसे साथ लिए लिए कहाँ फिरूंगा, मैं इसे एक जगह छोड कर भी स्वतंत्र—रूप से घूम न सकूंगा। आप सदाचारी धर्मात्मा नीतिमान और पवित्रात्मा है, इसलिए मेरी इच्छा इसे आपके यहा छोड

कर जाने की है,आशा है, आप मेरी बात की ठुकरायेंगे नही। मैं वापिस लौटते ही इसे अपने साथ ले जाऊंगा। तब तक यह आपके यहां रहेगी और आप के घर का सभी कार्य करेगी।''

प्रियंकर ने उस ब्राह्मण से कहा—"विप्रवर! मैं इस कार्य के लिए विवश हू। क्योंकि दूसरे की अमानत और उसमें भी दूसरे की स्त्री को अपने यहाँ रखने में बहुत जोखिम है। कल को कुछ होजाय तो मेरे मु ह पर कालिख लगे। इस नगरमें अनेक पवित्र धर्मात्मा और सदाचारी ब्राह्मण रहते है,उनमें से किसी के यहां आप अपनी पत्नी को रख दीजिए। ¡ इतना कहने पर भी ब्राह्मण पीछे ही पड़ गया। अति दीन स्वर मे गिड़गिड़ा कर कहने लगा—"महानुभाव! मेरी यहां किसी भी ब्राह्मण से जान पहिचान नही है। मै तो आपकी ख्याति व आपकी परोपकार वृत्तिकी बात सुनकर बड़ी आशा से आया हुं। आप मेरी प्रार्थना स्वीकार कीजिए। मै आपका उपकार कभी नही भूलूंगा।

ब्राह्मण का करुणापूर्ण आग्रह देख कर विवश होकर प्रियंकर को उसकी बात स्वीकार करनी पड़ी। साथ ही उन्होंने कहा—''आपका परिचय तो हमे बतला दीजिए ताकि कही हमारे साथ धोका न हो जाय।

ब्राह्मण बोला—'मेरा नाम केशवदेव है, मैं काशी देश का निवासी हूं। मेरा गोत्र काश्यप है। मेरे पिता का नाम कामदेव है। माता का नाम कांमदेवी है। यही मेरा संक्षिप्त परिचय है। परन्तु एक बात और कह देता हूं; आप उपर्युक्त परिचय के अतिरिक्त जिसके हाथ मे करवत हो और काले कपड़े पहने हो

उसे ही आप मेरी स्त्री का सोपना । "ऐसा कह कर ब्राह्मण वहा से रवाना सुआ । कोई ४–५ दिन हुए होगे, वह ब्राह्मण वापिस लौट कर आया । प्रियकर ने अचानक शीघ्र वापिस आए देख ब्राह्मण से पूछा—" विप्रवर! आप तो बहुत शीघ्र लोट आए क्या सिहलद्वीप नही गए ?

ब्राह्मण बोला—'महानुभाव' शकुन अच्छे न होने से मैने वहा जाने का स्थगित कर दिया । अब मै अपनी स्त्री को लेकर अपने घर ही चला जाना चाहता हू ।'

प्रियकर ने कहा—"खुशी से ले जाइए । , यों कह कर प्रियकर ने उसको स्त्री को सौप दी । "

ब्राह्मण अपनी स्त्रा को लेकर वहा से विदा हुआ ।

६ महीने बाद वही ब्राह्मण एक बड़ा हाथी लेकर प्रियकर के यहाँ पहुंचा । उस ने प्रियकर के साथ बडी सफाई से बात की—''महानुभाव! आपने मेरी पत्नी को अपने यहा रख कर बहुत उपकार किया । आपकी कृपा से मै इस हाथी को प्राप्त करने मे सफल हुआ हू । अब कृपया मेरी स्त्री मुझे वापिस सौप दीजिए । "

प्रियकर यह सुनते ही आश्चर्य में पड़ गया । उसने कहा—" क्या भूदेव! आप भी असत्य बोलने लगे? आप तो पाचवे दिन ही अपनी पत्नी यहा से लेकर चले गये ! पुनः आकर अपनी पत्नी लौटाने की बात कहते हुए आपको शर्म नही आती?'

ब्राह्मण ने भी गुस्से में आकर रौद्र रूप धारण कर के कहना शुरु किया—"वाह भाई वाह! कैसी बाते करते हो! क्या मुझे गरीब निःसहाय और अकेला समझ कर आप मेरी रूपवती और युवती स्त्री को हरण करना चाहते हो ! मै तो आपको धर्मात्मा और नीतिमान समझता था, परन्तु आप बड़े धोखेबाज निकले! ऐसा पता होता तो मै क्यों आपके यहां मेरी स्त्री रखता! हाय हाय ! कलियुग आगया है । अब भी समझ जाओ और सीधी तरह से मेरी स्त्री मुझे सौप दो । वरना मैं तुम्हारी फजीहत करूंगा और राज़ा के पास जाकर तुम्हारी शिकायत करूंगा । जनता के आगे तुम्हारे पापो का भंडा फोड़ किये बिना न रहूंगा मैं ब्राह्मण हूं, तुम्हारे द्वार पर धरना दे दूंगा और अपनी स्त्री लिए बिना नही जाऊंगा । उसे कहाँ छिपा कर रखी है, जरा बताओ तो सही! "ब्राह्मण इस प्रकार जोर—जोर से चिल्ला कर प्रियकर को बदनाम करने लगा । इससे प्रियंकर शर्म के मारे गड़ा जा रहा था । झूठे आरोप के कारण वह मन ही मन कुढ रहा था । फिर भी प्रियंकर ने उस ब्राह्मण को शान्ति पूर्वक कहा— "विप्रवर! आप मुझे झूठमूठ बदनाम क्यों करते है! मै भला आपकी स्त्री को क्यों रखता! मै तुम्हारे सामने कसम खाकर कहता हूं कि तुम्हारी स्त्री मेरे यहां नही है तुम उसे ले गये हो। व्यर्थ में बकवास मत करो । अगर कुछ द्रव्य की जरूरत हो तो कहो । मै तुम्हें दे सकता हूं ।"इतना कहने पर भी ब्राह्मण टससे मस न हुआ और उलटे जोर—जोर से चिल्लाने लगा—"बस-बस, रहने दो यह तुम्हारी सफाई ! मैं तुम्हारी इन बातों में आने वाला नहीं । क्या मुझे लालच देकर सचाई पर पर्दा डालना चाहते हो? सीधी तरह से नहीं मानते हो तो लो मजा

चख लो। यों कह कर ब्राह्मण ने थोड़े-से फासले पर पडी हुई तलवार उठाई और प्रियकर को मारने के लिए उतारू हो गया आसपास खडे लोगो ने ब्राह्मण का हाथ पकड लिया और उसे समझाने लगे। बहुत कुछ कहने पर भी जब ब्राह्मण न माना तो प्रियकर ने कहा—"किसी भी शर्त पर मानने को तैयार हो या नही?" ब्राह्मण बोला—हा मै एक शर्त पर चले जाने को तैयार हू। वह यह कि तुम जो मंत्री की पुत्री का कष्ट निवारण करने के लिए उवसग्गहर स्तोत्र का जाप कर रहे हो, वह बद कर दो।"

प्रियकर ने कहा—"मै तुम्हारी यह बात मानने को तैयार नही क्योकि महामत्रीजी को मैने वचन दिया है। उसे भग करना मैं अपनी आत्म-हत्या के समान समझता हू। पर आप यह तो बताइये उस अबोध कन्या के कष्ट निवारण करने मे आपकी कौनसी हानि है? उस अबला ने आपका क्या बिगाडा है, जिससे तुम उसके विरोधी बने हुए हो? मुझे लगता है आप ब्राह्मण नही है, कोई देव हो! सच-सच बताइए, इस बात मे क्या रहस्य है?" यह सुनते ही ब्राह्मण का वेष त्याग कर वह देव अपने असली रूप मै प्रगट हुआ। हाथी भी, जो खडा था, अदृश्य हो गया। बाद मे देव बोला—"हे नरश्रेष्ठ! इस राजवाडे में जो एक देव मन्दिर है, उस मे अधिष्ठित सत्यवादी नामक यक्ष मै ही हू। मत्री की कन्या एक दिन अपनी सखियों के साथ मेरे मन्दिर मे आई थी लेकिन मेरी मूर्ति देख कर हंसने लगी और अपनी सखियो के सामने मेरी मजाक करने लगी" मेरे इस सरासर अपमान से रुष्ट होकर ही मै उस लड़की को उस मजाक का फल चखा रहा हू।'

प्रियंकर ने कहा—"देव! तुम तो सज्ञान हो, उस अबोध लडकी के बराबर होना ठीक नही। आप देव है आपको गम्भीरता रखनी चाहिए। हाथी के पीछे कुत्ते भौकते है तो क्या हाथी उनसे झगडता है! वह तो अपनी राह चला जाता है। इसी प्रकार आप भी उस अज्ञान बालिका के प्रति रोष न करके दया करिए।" प्रियंकर के वचन सुन कर देव का रोष ठडा पडा। उसने कहा—"प्रियंकर! तुम्हारे उवसग्गहर स्तोत्र के जाप करने का ही प्रभाव है या यों कहो कि ऐसा दबाव है कि अब मै मंत्री की कन्या के शरीर में रह नही सकता था और न ही उपद्रव कर सकता था। मैंने तो तुम्हारी कसौटी करने के लिए तुम्हे हैरान करने एवं उवसग्गहर स्तोत्र के जाप से विचलित करने का यह नाटक रचा था। तुम इस कसौटी पर खरे उतरे हो। इसलिए मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हूं। जो चाहो सो माँग लो मै देने को तैयार हू। प्रियकर बोला— "देव। मुझे कोई आशा-आकाँक्षा नही है। अगर आप मुझ पर प्रसन्न है, तो मन्त्री पुत्री को क्षमा कर दो उसे कष्ट देना छोड़ दे!" देव—"मैं तुम्हारे कहने से उसे कष्ट देना छोड़ देता हूं! परन्तु उसने मेरी बहुत निन्दा और अवज्ञा की है,उसका दुष्फल तो उसे भोगना ही होगा इस अवज्ञा के परिणाम स्वरूप उसके बहुत ही सन्तान होगी। और साथ ही मैं तुम्हे यह वरदान देता हूं कि तुम हर एक पक्षी की भाषा समझ जाओगे।"देव वरदान देकर अन्तर्हित होगया।

अब प्रियंकर के द्वारा उवसग्गहर स्तोत्र के ५०० जाप से मन्त्री-पुत्री को पूर्ण आराम होगया था। वह सर्वथा रोग मुक्त और कष्टमुक्त होगई। इस से महामन्त्री बहुत हो हर्षित हुए

और प्रियकर का अत्यन्त आभार माना। महामन्त्री ने अपनी पुत्री यशोमती को विवाह-योग्य समझ कर अपने परम-उपकारी गुणवान प्रियंकर के साथ उसकी शादी कर दी। पूर्वोक्त यक्ष का शाप होने से यशोमती को प्रतिवर्ष सन्तान-युगल पैदा होता था। इस तरह बारह वर्ष तक मन्त्रि-पुत्री यशोमती अपनी संतति के प्रसव, लालन-पालन और सेवा-शुश्रूषा मे शरीर से अशक्त हो गई। प्रियकर निरन्तर प्रभु-भक्ति व उवसग्गहर स्तोत्र का पाठ एवं आवश्यकक्रिया करते हुए अपना जीवन पवित्रता से व्यतीत करता था।

कौए के द्वारा बताए गए धन की प्राप्ति

यक्ष के वरदान के कारण प्रियकर पक्षियो की बोली समझता था। एक दिन वह तीर्थंकर-मूर्ति की पूजा करके घर लौट रहा था कि रास्ते मे एक वृक्ष पर बैठा हुआ कौआ अपनी भाषा मे बोल रहा था—"हे भाग्यवान! इस वृक्ष के नीचे तीन हाथ के फासले पर भूमि मे एक लाख सोने की मुहरो से भरा हुआ एक घडा गडा हुआ है। आप उसे खोद कर निकाल ले आप मुझे कुछ खाने को दो! "प्रियकर ने कौए के ये शब्द सुन कर तत्काल उसके बताए गए संकेत के अनुसार भूमि खोदी तो धन का घडा मिल गया' उसने तुरंत कौए के लिए कुछ खाना ला कर दे दिया और उस निधि को सुरक्षित रूप से घर ले आया।

—०—

राजा के अशुभ स्वप्न और राजकुमारों की मृत्यु

जब भाग्य विपरीत होता है तो चारों ओर से आपदाएं आकर घेर लेती है और मनुष्य पराधीन हो जाता है। अशोकपुर नगर के राजा अशोकचद्र के दो जवान पुत्र—अरिशूर और रणशूर—कुछ ही दिन बीमार रहे और सहसा सदा के लिए चल बसे। इन दोनों प्रियपुत्रो के वियोग ने राजा को शोकग्रस्त और विक्षिप्त बना दिया। उसका मन अब किसी भी काम मे नही लगता था और राज्यकार्य मे भी अब उसे दिलचस्पी नही थी। मन्त्रि-गण राजा को इस दुःख को भुलाने के लिए बहुत प्रयत्न करते, परन्तु राजा वार वार अपने मृत पुत्रों को याद करता तो उसकी आँखों के आगे अन्धेरा छा जाता। नगर के अग्रगण्य महाजनों मन्त्रियो और राज्याधिकारियो के वहुत कुछ समझाने पर राजा किसी तरह राजसभा मे आने लगा परन्तु सर्वदा चिन्तातुर ही रहता।

एक दिन रात को सोते-सोते राजा को एक दुःस्वप्न आया—'मै एक ऐसी सवारी मे बैठ कर दक्षिण दिशा की ओर जा रहा हूं जिसके आगे दो गधे जोड़े गये है।' राजा ने दूसरे दिन अपने मन्त्री के सामने इस दु स्वप्न का हाल सुनाया। मन्त्री ने स्वप्नशास्त्रविदों को बुला कर इस स्वप्न का फल पूछा। उन्हो ने आपस में परामर्श करके उक्त स्वप्न का फल बताया कि— "मन्त्रीवर्य! इस स्वप्न का स्वप्नशास्त्र के अनुसार सामान्यतया फल निकट-भावी मृत्यु है।" राजा स्वप्न का फल सुनते ही चिन्तामग्न हो गया। स्वप्न-शास्त्रियो ने कहा-"राजन्

अब आप जितना हो सके प्रभु का जाप दान, तप, शुभभावना और शील पालन कीजिए।' राजा उसी दिन से उपर्युक्त धर्म-कार्यो मे रत रहने लगा।

दो प्रकार की आकाशवाणी

एक दिन प्रियंकर राजसभा में जा रहा था कि अचानक आकाशवाणी हुई-"आज राजसभा मे तुम पर चोरी का आरोप लगेगा और तुम्हे बधन मे डाला जायगा।' ऐसी अशुभ वाणी सुन कर प्रियकर को कुछ चिन्ता-सी हुई कि मैंने कोई अधर्म अनीति या बेईमानी का कार्य इस जन्म मे किया हो, ऐसा याद नही आता फिर क्यों ऐसा अशुभसूचक वाणी हुई? पता नही, कौन-से अशुभ कर्म उदय मे आने वाले है?" प्रियकर का धर्म पर पहले से ही दृढ विश्वास था, अब और अधिक दृढ विश्वास हो गया, तथा मन मे निश्चय कर लिया कि—मेरा काम सद्धर्म और सत्कार्य मे पुरुषार्थ करना है। इतना करने पर भी जो कुछ भी सकट व दुःख आएगा, वह तो आएगा ही, उसे टालने के बजाय उसे समभावपूर्वक सहन करके उस पर विजय ही क्यों न प्राप्त कर लू! ऐसा विचार करते हुए और उवसग्गहर स्तोत्र का मन मे ध्यान रखते हुए वह राजसभा मे जा रहा था। तभी एक और आकाश-वाणी सुनाई दी—"हे प्रियकर! आज तुम्हे इस नगर का राज्य मिलेगा। यों परस्पर विरोधी दो अकाशवाणिया सुन कर हर्ष एव शोक मे अनासक्त होकर प्रियंकर ने राजसभा मे प्रवेश किया।

हार की चोरी का आक्षेप

राजा अशोकचन्द्र राजसभा में सिहासन पर बैठा था। प्रियंकर ने राजसभा मे अधिक भीड देख कर दूर से ही राजा को नमस्कार किया। दैवयोग से उसी समय अचानक ही, न जाने कही से एक बहु-मूल्य हार प्रियकर के गले में आकर पड़ा। राजा और उपस्थित समस्त जनता ने प्रियंकर के गले में वह कीमती हार पड़ा देखा और सोचने लगे—'यह तो वही हार है,जो राजा ने स्वर्णकलाकारों से बनवाया था और जिसका नाम 'देववल्लभ' हार रखा था। यही हार खजाने से चुरा लिया गया था।' 'इस प्रकार आपस मे काना-फूसी करके सभी कहने लगे—"प्रियकर। इसी हार की चोरी राजा के खजाने से हो गई थी। तुम्हारे पास यह हार कहां से आया? चोरी के सिवाय और किसी उपाय से यह हार तुम्हारे पास नही आ सकता था।"

प्रियंकर को यह सुन कर ऐसा लगा मानो पैरों के नीचे से धरती खिसक रही हो। प्रियंकर ने जनता के प्रश्न का कोई उत्तर न दिया और मन ही मन सोचा-'हे प्रभो। क्या मैंने किसी जन्म में किसी पर चोरी का कलंक लगाया था, उसी का फल उदय में आया है, जो भी हो मुझे इस संकट को भी समभाव-पूर्वक सहन करना ठीक-है।"

प्रियंकर के गले में देववल्लभहार पड़ा देख कर तथा प्रश्न के जवाब में मौन देख कर राजा ने आग-बबूला होकर कोतबाल को आदेश दिया—"राजा के खजाने मे चोरी करने का

दुःसाहस करने वाले ऐसे व्यक्ति को शीघ्र ही फासी की सजा दो " इतने में चारो ओर का शोरबकोर सुनकर महामन्त्री आ पहुचे। उन्होंने घटना का पता लगा कर राजा से निवेदन किया—"महाराज ! अपराधी से बिना कुछ भी पूछे सहसा फांसी की सजा का फरमान कर देना ठीक नही है। आप अपराधी कहे जाने वाले व्यक्ति से पहले पूछिए तो सही कि यह देववल्लभहार उस ने कहा से और कैसे प्राप्त किया है और उसके बाद यह साबित हो जाय कि वह वास्तव में अपराधी है तो उसे अवश्य यथोचित दण्ड दीजिए। प्रियकर धर्मपरायण, नीतिमान और परोपकारी व्यक्ति है, उनके बारे मे ऐसी बात अघटित लगती है। अनहोनी बात के पीछे कोई न कोई रहस्य मालूम होता है।' राजा मन्त्री के कहने से कुछ शान्त हुआ और प्रियंकर से पूछने लगा—"प्रियकर सच सच कहो, यह देववल्लभहार तुम ने कहाँ से और कैसे प्राप्त किया है। अथवा यह हार तुम्हे किसी ने दिया है, या तुम्हारे पास गिरवी रखा है। प्रियकर ने नम्रता-पूर्वक कहा—"राजन् ! मुझे स्वयं आश्चर्य हो रहा है, कि यह मेरे गले में कैसे आकर पडा न तो इस हार को आज तक मैने कभी देखा है और न इस हार को मैने कही से चुराया है, न ही मेरे पास किसी ने यह गिरवी रखा है। मुझे खेद है कि मेरे विषय मे आपको ऐसी बुरी(चोरी की) कल्पना पैदा हुई। मै इस हार के बारे मे कुछ भी नही जानता।"

यह सुन कर राजा कहने लगा-"देखो, देखो ! यह कैसा भोला और अनजान बन रहा है, मानो इस हार से कोई वास्ता

ही न हो। बाते न बनाओ प्रियकर ! तुम्हारी इन बनावटी बातो से मुझे सन्तोष नही है। जो बात हो सही बता दो। नही तो मै तुम्हारी खाल उधडवा दूंगा। जानते हो राजा का कोप कितना भयंकर होता है।"

मंत्री ने बीच में ही कहा—'महाराज किसी कार्य को करना हो तो उसके सभी पहलुओं पर विचार कर लेना चाहिए। मुझे इस घटना के पीछे कोई दैवी शक्ति का हाथ प्रतीत होता है। अतः आप दण्ड देने के विषय में उतावल न करे, धैर्य रखे।

राजा गुस्से से आँखे तरेरते हुए बोल उठा—"बस-बस रहने दो मत्री जी ! आप मुझे उटपटाग बातों के बहकावे में लाना चाहते है मैं बहकावे मे नही आ सकता। मै जानता हूं कि यह तुम्हारा दामाद है। इसलिए तुम इसके बचाव के लिए इसका पक्ष कर रहे हो ! पर याद रखना चोरी करने वाला, चोर का पक्ष लेने वाला, चोर को सलाह देने वाला, ये सब चोर की श्रेणी में ही गिने जाते है। इसलिए तुमने यदि इसका पक्ष लिया, तो तुम्हारी दशा भी वही होगी, जो इसकी होगी।"

मंत्री ने देखा—"राजा अब नम्रता और विवेक की संयुक्त वाणी को भी ठुकरा रहा है और इसमें भी उसे पक्षपात की गंध आ रही है तो मुझे मौन रहना ही उचित है। मैने अपना कर्त्तव्य अदा कर दिया अब जो होगा सो देखा जायगा।" मंत्री मौन हो गया। राजा के मस्तिष्क में सहसा एक धुंधली-सी स्मृति उभर आई— "मुझे एक बार नैमित्तिक ने कहा था कि देववल्लभ हार की चोरी करने वाले को ही यह राज्य प्राप्त

होगा ।' अतः क्यो न ही मै उस नैमित्तिक के कथन को सर्वथा निष्फल और मिथ्या सिद्ध करदू । राजा ने मूछो पर ताव लगाते हुए कोतवाल को पुनः आदेश दिया–"बस अव और अधिक इतजार न करो। इस हार चुराने वाले को फॉसी पर चढ़ा कर मृत्यु का राज्य दे दो। मै देखता हू कौन मेरे पुत्र को राज्य देने से रोकता है, और इस चोर को राज्य देता है।"

दण्ड से मुक्ति और राज्य की प्राप्ति

राजा के आदेश से कोतवाल प्रियकर को मृत्युदण्ड देने के लिए फॉसी के तख्ते पर ले जाने ही वाला था कि अचानक प्रियकर की सहायता करने के लिए चार दिव्यरूपधारिणी देवाङ्गना - सरीखी महिलाए राजसभा मे आ धमकी। मत्री ने मौका देख कर कहा–"राजन्! मैं कहता था न, कि इस घटना के पीछे किसी-न-किसी दैवी शक्ति का हाथ है। आप मेरी वात पर विश्वास नही कर रहे थे। लेकिन वही वात निकली इन चारों दिव्यरूपधारिणी महिलाओं का अकस्मात् यहा आना इस वात को सूचित करता है। आप माने या न माने। इस घटना का रहस्य कुछ ही देर मे खुल जायगा। अतः तव तक आप प्रियकर को दड देने की उतावल न करे।' उन चारो ललनाओ का अनुपम रूप और तेज देख कर राजा और सभी सभासद चकराए। सभी दिङ्मूढ होकर उनकी ओर घूरने लगे। अन्ततोगत्वा राजा ने उनका स्वागत किया और पूछा— "आप कौन है? कहा से आ रही है? आपके अचानक यहाँ पर आने का प्रयोजन क्या है?" उन चारों ललनाओं मे जो सबसे वडी उम्र की थी वह कहने लगी—"राजन्! हम पाटलीपुत्र से आई है।

प्रियकर नाम का हमारा एक पुत्र दो साल हुए नाराज होकर घर से भाग गया है। दो वर्ष से हम उसकी तलाश मे भटक रही है। हमें यहाँ आने पर पता लगा कि जिस युवक की हम बात कर रही है और जो हुलिया बता रही है। हूबहू वैसा ही अनुपम रूप लावण्य से युक्त चतुर विचारक और बुद्धिमान वणिक के पुत्र इस अशोकपुर नगर में रहता है। यह सुनते हमे बडी आशा बंधी और हम सीधी इसी नगर में आई। यहाँ नित्यनियम करने के बाद स्थानीय लोगों से प्रियकर का निवास-स्थान आदि पूछा तो उन्होंने कहा—"प्रियंकर पर तो चोरी का इलजाम लगा है और उसे मृत्युदण्ड सुनाया गया है। कुछ आगे चलने पर पता लगा कि-'प्रियंकर को मृत्युदण्ड देनेके लिए फाँसी के तख्ते पर ले जाने की तैयारी है। यह सुनते हो हमारे होश हवास उड़ गये। हम तुरंत यहाँ आपकी सेवा में आई है। कृपा करके आप प्रियंकर को दण्डमुक्त कर दीजिए। हम उसके प्राणों की भिक्षा मांग रही है। आपको हम मुंह माँगा फल देने को तैयार है। आप हमें अपने पुत्र की भिक्षा देकर कृतार्थ करें।

राजा ने प्रियकर की ओर अंगुली से इशारा करते हुए उस वृद्धा से पूछा—"क्या यहो तुम्हारा पुत्र है।" वृद्धा ने कहा—"हाँ राजन्! यही मेरा प्रिय पुत्र प्रियंकर है।" यों कहते हुए वृद्धा ने प्रियंकर को छाती से लगा लिया और प्यार करने लगी। दूसरी महिला बोलो—"यही मेरा भाई प्रियकर है। तीसरी ललना ने कहा—" यही देवर है।" चौथी स्त्री ने कहा—" यही मेरे पतिदेव हैं।"

इस आकस्मिक घठना और कुतूहलपूर्ण हश्य को देख कर

सभी सभासद आश्चर्य चकित होकर देखते ही रहे। इस घटना से कुछ लोग कहने लगे—"यह प्रियकर दभी कपटी और धूर्त मालूम होता है। कुछ लोग प्रियकर का उपहास करने लगे—अजी देखो! कैसी बनावटी मा बहन भाभी और पत्नी मिल गई है प्रियकर को! कई लोग प्रशसा करने लगे—'वाह वाह! कितना भाग्यशाली युवक है यह!" इस अभूत-पूर्व दृश्य को देख कर थोड़ी देर के लिए चारो ओर सन्नाटा छा गया। प्रियकर स्वय भी यह देख कर आश्चर्य-मग्न होकर विचार करने लगा कि ये चारो अजनवी महिलाए कहा से और कैसे आगई! वह तो ठगा-सा शान्तमुद्रा मे मौन खड़ा रहा। उनमे से वुढिया माता फिर उतावल करने लगी" राजन! मेरे पुत्र को अव झटपट मुक्त करके मुझे सौप दीजिए।" राजा ने कहा—"इसने मेरा एक लाख स्वर्णमुहर का हार चुराया है। इसे मैं कैसे छोड सकता हू।' वृद्धा वोली—' आपकी इच्छा हो उतना धन देने को तैयार हू, पर मेरे पुत्र को शीघ्र छोड़ दे।' "मगर मै तो तीन लाख स्वर्णमुद्रा लेकर ही छोड़ सकता हू, पहले नही।" राजा ने दृढ़ता से कहा।

वृद्धा—"मै तो इससे भी अधिक धन कहे तो देने को तैयार हू, पर आप इसे मुझे सौपे तव ही।"

राजा—'अच्छा! पहले यह वताओ कि इसका पिता कहा है?"

वृद्धा—"हम जहाँ ठहरी हैं, वही इन का पिता है।"

राजा ने उसे शीघ्र वुलाने का आदेश दिया। राजपुरुष

शीघ्र ही उनके बताए हुए संकेतके अनुसार उस व्यक्ति को बुला लाए। राजा ने आगतुक व्यक्ति से पूछा–"क्या यह आपका ही पुत्र है।" आगंतुक बोला—"जी हा! यह मेरा ही पुत्र है। पुत्र के वियोग से हमारा साग परिवार दुःखित हो रहा है। आप इसे शीघ्र हमे सौंप दीजिए।" महामत्री ने देखा कि ये तो कोई नकली माता-पिता आदि बनकर आये है। कही धोखेबाजी लगती है। महामंत्री ने तुरंत राजा के कान मे कहा—"मुझे तो ये लोग धूर्त दीखते है। इनकी पहले पक्की जांच कर लेने के बाद ही प्रियंकर को सौपियेगा, पहले नही। इसलिए मेरी सलाह यह है कि आप पहले इस नगर मे विद्यमान प्रियंकर के पिता पार्श्वदत्त और माता प्रियश्री को बुला कर सारी तहकीकात कीजिए। फिर आगे का कदम उठाइए।"

राजा ने कहा—"ऐसा ही होगा।

शीघ्र ही राजा का आदेश पाकर राजसेवक प्रियंकर के पिता पार्श्वदत्त और माता प्रियश्री को बुला लाए। वे दोनो जब राजसभा मे आए तो दोनो का चेहरा डीलडौल, उम्र और कद मिलते-जुलते थे। राजा को निर्णय करना कठिन हो गया कि कौन प्रियंकर के असली माता-पिता है। राजा ने मंत्रीश्वर से कहा—"मत्रीवर! आपका कहना सच निकला। वास्तव मे यहां कुछ-न-कुछ धोखा-धड़ी है।" राजा को कहना पड़ा कि जो प्रियंकर का वास्तविक माता-पिता सिद्ध होगा उसे ही प्रियंकर सौपा जायगा।" इधर पार्श्वदत्त और प्रियश्री कहने लगे कि प्रियंकर हमार पुत्र है, वैसे ही आगतुक पुरुष और वृद्धा स्त्री भी दावा करने लगी कि यह तो हमारा ही पुत्र

है। दो वर्ष हुए तब से हम इसकी तलाश मे जगह-जगह भटके हैं। दोनो ओर दोनो माता-पिताओ मे आपस में गर्मागर्म बहस होने लगी। तू-तू मैं-मैं बढने लगी। वातावरण उग्र होता गया। आखिरकार दोनों माताओ एवं पिताओं ने राजा जशांक चन्द्र से प्रार्थना की—"आप सा न्याय कीजिए। अन्यथा हम न्याय कराने दूसरे राजा के पास जायेंगे।" राजा को पशोपेश में पड़ा देख बुद्धिमान मंत्री बोला "महाराज! आपकी आज्ञा हो तो मै इस मामले को हाथ मे लूं और न्याय दूं।" राजा ने मंत्री को आज्ञा दे दी। बुद्धिमान और विचक्षण मंत्री ने दो पक्षों से कहा—"देखो! इस राजसभा मे वह जो लम्बाई-चौड़ाई में १८ गज चकोर शिला पड़ी है, जिस पर सभी नजराना देते है, उसे एक हाथ से जो उठा लेगा वही असली माता पिता कहायेंगे।" यह सुनते ही पाटलीपुत्र से आए हुए माता-पिता ने क्षणभर में एक हाथ से एक-एक बार वह भारी-भरकम शिला उठा कर बता दी। उनके अद्भुत पराक्रम को देख कर सभी सभासदों ने हर्ष से तालियां बजाईं।

मन्त्रीवर ने सोचा—"इतनी भारी भरकम शिला एक हाथ से उठा लेना मानवीय शक्ति से बाहिर की बात है। ये मानव तो नही हो सकते। प्रच्छन्न-वेष में कोई देव मालूम होते है।" मंत्री ने तुरन्त प्रियंकर के मनुष्यरूपधारी माता-पिता से पूछा—"आप में जो शक्ति है, वैसी मनुष्य में तो नही हो सकती। अतः आप कोई देव दीखते है। आप कृपा करके अपना वास्तविक रूप प्रगट कीजिए और यह भी बतलाइए कि अपने यहाँ पर पधारने का कष्ट

क्यों किया है? प्रियंकर को अपना पुत्र कहने के पीछे आप का क्या इरादा है?"

यह सुनते ही चारों देव स्वरूपधारिणी महिलाएँ तो अदृश्य हो गई। प्रियंकर के पिता बने हुए देव ने कहा— "मन्त्रीवर एव राजन्! मै इस राज्य का अधिष्ठायक देव हू। सच पूछे तो मै यहाँ राजा अशोक चन्द्र को उसका अन्तिम समय सूचित करने तथा इस राजगद्दी पर बैठने योग्य पुरुष को गद्दी पर बिठाने आया हू। मै राजा जी से विनति करूगा कि वह अब राज्य का मोह छोड दे। अपना अन्तिम समय निकट जानकर वे धर्ममय जीवन बितावे परमात्म-भक्ति मे चित्त लगावे।' यह सुन कर राजा भौचक्का रह गया उस ने देव से पूछा— "अच्छा, यह तो बताइए कि मेरी मृत्यु कब होगी?" देवता ने उत्तर दिया— "आज से सातवें दिन तुम्हारी मृत्यु होगी।" यह सुनते ही राजा भय के मारे काँपने लगा। राजा ने पुत्र-मोह-वश पूछा— "क्या मेरे मरने के बाद मेरी राजगद्दी पर मेरा पुत्र नही बैठेगा?" देवने साफ शब्दों मे कहा— "नही, उसे राज्य नही मिलेगा। उसका आयुष्य भी अल्प है और वह राज्य करने लायक भी नही है।" राजा कातर-स्वर से बोला— "तो इस राज्य को सभालने योग्य कौन व्यक्ति है? यह तो स्पष्ट बता दीजिए।" देव ने उत्तर दिया— "प्रबल पुण्यशाली प्रियंकर ही इस राज्य को संभालने के योग्य है।"

"है है प्रियंकर! वह तो मेरे देववल्लभहार की चोरी करने वाला है। उसे आप कैसे राज्य करने लायक व्यक्ति समझते है।

राजा ने उत्सुकतावश पूछ डाला।"

देव ने स्पष्टीकरण करते हुए कहा— "इस देववल्लभ-हार की चोरी प्रियकर ने नही की है। उस पर वहम से चोरी का आरोप लगाया गया है। मैने ही यह हार खजाने मे से उठाकर प्रियकर के गले मे डाला है। इसका मुख्य-कारण यह है कि जिसके गले मे यह हार पडेगा वही इस राज्य का स्वामी होगा, यह देववाणी अन्यथा नही हो सकती। प्रियकर राज्य करने के योग्य है या नही, अगर इसकी प्रतीति तुम्हे करनी हो तो नगर की ४ कुमारिकाओ को बुलाकर सबके हाथ मे एक-एक थाल कुकुम अक्षत आदि से युक्त दिया जाय और उन्हे कहा जाय कि इतने आदमियो मे तुम चाहो जिसके तिलक करो। वे जिसके तिलक करे उसे राज्यकर्ता के योग्य समझा जाय और उसे ही राज्य सौपा जाय।'

राजा देवता की इस बात से सहमत हुआ। शीघ्र ही नगर की चार कन्याओ को सम्मान पूर्वक राजसभा मे बुलाया गया और सबके हाथ मे कुकुम अक्षत आदि से युक्त एक-एक थाल दे दिया गया और उन्हे कहा गया—"हे कुमारियो! इस राज-सभा मे जितने लोग बैठे है, उन सब मे से तुम्हारी इच्छा हो उस व्यक्ति के तिलक कर दो। चारो कुमारिकाए सारी सभा मे सबके चेहरे देखती हुई घूमी। अन्त मे उन चारो ही ने प्रियकर के ललाट पर तिलक किया। साथ ही उन चारो कुमारिकाओ ने बारी-बारी से प्रियकर की मगल-कामना सहित आशीर्वाद भी दिया

प्रथम कुमारिका बोली—"हे प्रियंकर! तुम राजा बनना। जिनेश्वर देव की भक्ति करना। शूरवीरों में श्रेष्ठ होना और प्रजा का न्याय-पूर्वक पालन करना।"

दूसरी कुमारिका बोली—"प्रियंकर! राजा के राज्य में क दुष्काल का नामोनिशान नहीं रहेगा; सदा सुकाल ही रहेगा।

तीसरी कुमारिका बोली—"प्रियंकर राजा! अपने पुण्य-बल द्वारा ७२ वर्ष तक भलीभाँति राज्य करो, यही हमारी शुभकामना है।"

चौथी कुमारिका बोली—"प्रियंकर राजा के राज्य में कभी रोग, शोक, महामारी और चोर आदि का भय नहीं रहेगा।"

यह देखकर राजा अशोकचन्द्र देवता व नगर के प्रतिष्ठित जनों और मंत्रिमंडल के समक्ष प्रियंकरको बन्धन से मुक्त करवा कर अपने हाथ से राज्य-तिलक किया। राजसभा 'प्रियंकर राजा की जय" के नारों से गूंज उठी। देव राज्याभिषेक करके अपने घर चला गया। ठीक सातवे दिन अशोकचन्द्र राजा का देहावसान हुआ। प्रियंकर राजा ने सम्पूर्ण राज्य मे शोक मनाया इसके कुछ ही दिनों के बाद अशोकचन्द्र राजा का तीसरा पुत्र भी मर गया। प्रियंकर राजा ने उदारतापूर्वक अशोकचन्द्र राजा के सम्बन्धियों को कुछ ग्राम देकर सन्तुष्ट किया।

प्रियंकर राजा ने धनदत्त सेठ की श्रीमती नाम की अपनी पत्नी को पटरानी पद दिया। पटरानी से एक पुत्र हुआ। उसका नाम राजा ने 'जयकर' रखा। उसका जन्म-महोत्सा

भी खूब धूमधाम से किया गया । इसी बीच राज्य के मुख्य-मंत्र हितकर का देहावसान हो जाने से उसके पुत्र को मत्रीपद के योग्य समझ कर मत्री-पद दिया । इस प्रकार राजा प्रियकर अनेक वर्षों तक न्याय नीति पूर्वक राज्य का परिपालन करता रहा ।

धर्माचार्य के दर्शन

एक बार अशोकपुर नगर के अहोभाग्य आचार्य धर्मनिधिसूरि अपने शिष्यसमुदाय सहित अनेक ग्रामों नगरो मे विचरण करते हुए पधारे । प्रियकर राजा आचार्यश्री का अगमन सुनते ही परिवार-सहित उनके दर्शनार्थ उद्यान मे पहुचा । विधिपूर्वक वन्दना करके यथोचित स्थान पर बैठ कर आचार्य श्री जी की अमृतमयवाणी का पान करने लगा । आचार्यश्री ने 'शत्रुञ्जयतीर्थ माहात्म्य' पर विवेचन किया । सुनकर प्रियंकर राजा की भी उत्कण्ठा शत्रुञ्जयतीर्थ की यात्रा करने की हुई । राजा प्रियकर ने यह नियम लिया कि—"मैं एक वार शत्रुञ्जयतीर्थ की यात्रा अवश्य करूगा ।" आचार्यश्री ने कहा "तुम्हे जैसा सुख हो वैसा करो परन्तु एक बात जरूर ध्यान रखना कि तुम्हें जो भी सुख के साधन मिले है या राज्य ऋद्धि मिली है वह सब 'उवसग्गहर स्तोत्र' के जप के प्रभाव से ही मिली है । अतः उसे न भूलना । आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने धरणेन्द्र की प्रार्थना से इस स्तोत्र की छठी गाथा लोपनीय रखी हैं । अभी सिर्फ इसकी ५ गाथाए ही प्रचलित है।"प्रियकर राजा आचार्य देव की मधुरवाणी सुन कर सपरिवार घर आया और उसी दिन से राजभवन के निकट पार्श्वनाथ चैत्य मे

रात्रि को प्रतिदिन ३ घ टे उवसग्गहर स्तोत्र की आराधना मे विताने लगा।

प्रियकर राजा इन्द्रलोक मे

एक दिन प्रियकर राजा पार्श्वनाथ प्रभु के मन्दिर मे धूप-दीप करके उवसग्गहर स्तोत्र का जाप करने बैठा हुआ था। नौकर वहाँ मंदिर के बाहर बैठे थे। रात समाप्त हुई। प्रातः काल होने पर भी राजा प्रियकर मन्दिर से बाहर नही निकला। उन्हे शका हुई कि क्या बात है। मत्री आदि सभी राजकर्मचारी वर्ग वहा एकत्रित हुए। और मदिर की खिडकी मे से झाँक कर देखा तो वहाँ कोई भी दिखाई न दिया सिर्फ एक दीपक जलता दिखाई दे रहा था। मूर्ति की पूजा अभी-अभी हुई है, ऐसे चिह्न दृष्टिगोचर हो रहे थे: लेकिन राजा न दिखाई दिया। सभी ने दरवाजा खोलने की कोशिश की पर वह न खुला। फिर हथियार लाकर दरवाजा तोड़ने का प्रयत्न किया परन्तु वह न टूटा। अन्ततोगत्वा निराश होकर सभी एकाग्र-चित्त होकर पार्श्वनाथ प्रभु की स्तुति करने लगे। इतने मे आकाशवाणी हुई कि तुम्हारे राजा को धरणेन्द्र देवलोक मे ले गये है। दश दिन बाद राजा देवताओं के घोड पर बैठ कर यहाँ आयेंगे, प्रभु की पूजा करेंगे। यह सुनते ही सभी लोग हर्षित होकर अपने-अपने घर चले गए और दसवें दिन की प्रतीक्षा करने लगे।

दसवें दिन सुबह से ही नगर के सभी नर-नारी-वृन्द राजा प्रियंकर की जय बोलते हुए राजा से मिलने के लिए सहर्ष

वन की ओर जा रहे थे। सूर्योदय होने के कुछ ही देर बाद सामने से घोडे पर सवार होकर आता राजा दिखाई दिया। सबको पूरा विश्वास हुआ कि आकाशवाणी की बात तो सत्य है। राजा को सबने प्रणाम किया। राजा प्रियकर ने सब पर अमृत-दृष्टि डाली और हाथ से आशीर्वाद देते हुए पूछा—" आप सब कुशल तो है न ! आपको मेरे विषय मे कैसे और किनसे पता लगा! मंत्री ने कहा—"राजन्! जिस दिन रात को आप पधार गये थे, उसके दूसरे दिन सुबह होते ही जब हमने आपको मन्दिर मे न देखा; बाहर भी आपका कही पता न लगा तो मन्दिर का दरवाजा खोलने और ० ने का प्रयत्न किया। लेकिन सब व्यर्थ। आखिर हमने पार्श्वप्रभु की स्तुति की जिससे अकाशवाणी हुई, जिसमे आपके विषय मे बताया गया।" नगरजनों सहित राजा प्रियकर राजसभा मे जाने से पूर्व प्रभु-मन्दिर की ओर चल पड़े। जब मन्दिर दिखाई दिया तो राजा की मन्दिर पर दृष्टि पडते ही उसके दोनो कपाट स्वयमेव खुल गए। फिर राजा ने विधिपूर्वक पूजा की। तत्पश्चात् वह अपने महल मे गया, जहाँ सब लोग उसके आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। राजा को देख कर सबके जी मे जी आया। राजा सबको आश्वासन देकर कुशल पूछ कर राजसभा मे आया। राजा जब स्वस्थ होकर सिहासन पर बैठ गया तब मत्री व अन्य प्रजाजनो ने प्रार्थना की—"राजन्! कृपा करके हमे भी देवलोक का स्वरूप बतलाइए।"

राजा ने अपनी इन्द्रलोक-गमन की रामकहानी कहनी शुरु की—"प्रजाजनो! जिस समय मै पार्श्वनाथ प्रभु के मन्दिर

में बैठा-बैठा 'उवसग्गहर स्तोत्र' का पाठ कर रहा था, उस समय अचानक ही कही से काले रग का एक भयकर साप फन उठाए मेरे पास आया और मुझे डराने लगा। उसने अनेक उपसर्ग करके मुझे अपनी साधना से विचलित कर और डराने का प्रयत्न किया। परन्तु मै तिलभर भी अपनी साधना से चलायमान न हुआ जब वह क्रोध मे आकर प्रभु जी की प्रतिमा पर चढने लगा, तब मैने प्रभु की आशातना होती देख रह न सका और उसे पूछ से पकड कर नीचे उतारा। उस समय वह सर्प अपनी सर्पाकृति छोड़ कर दिव्य आकृति वाले एक देव के रूप मे दिखाई दिया। मैने उससे पूछा—"आप कौन है? यहाँ किस प्रयोजन से आये है?" उसने कहा—"मै श्री पार्श्वनाथ प्रभु का सेवक धरणेन्द्र हूं। तेरे द्वारा किये गए 'उवसग्गहर-स्तोत्र से आकर्षित होकर मै यहा तेरी परीक्षा करने आया था। मै तेरी दृढता, निश्चलता और साहसिकता को देख कर तुझ पर प्रसन्न हुआ हू। अतः तुम मेरे साथ मेरे पाताल-लोक में चलो। वहाँ मै तुम्हे पुण्य का फल बताऊंगा।" मैं तुरंत उस धरणेन्द्र देव के साथ चल पड़ा। वहां पर मैने प्रत्येक स्थान पर सोने व रत्नों से जटित भूमि देखी। फिर मैंने धर्मराजा का वैत्रिय-महल, धर्मराजा एव पटरानी जीवदया को देखा। उन्होंने कहा—"तू हमारी कृपा से चिरकाल तक सुखपूर्वक राज्य करेगा। प्रजा को सतुष्ट व प्रसन्न रखेगा। आदि।

वहा से कुछ दूर चल कर मैंने सात कमरे देखे। मैंने धरणेन्द्र से पूछा कि इन सात कमरों में क्या है! धरणेन्द्र ने कहा—"इन सातों कमरों मे सात तरह के सुख है।"

मैंने पूछा—"वे कौन-कौन-से है !"

धरणेन्द्र— "(१) आरोग्य, (२) लक्ष्मी, (३) यश, (४) पतिव्रता, स्त्री, (५) विनयवान पुत्र, (६) राजा की अनुपम सौम्य दृष्टि और (७) निर्भय स्थान। ये सातों प्रकार के सुख जिस घर मे हों समझ लेना, उस घर मे साक्षात् धर्म का निवास और प्रभाव है।"

"इन सातों कमरों का परिचय प्राप्त करके मैंने क्रमशः प्रत्येक कमरे मे प्रवेश किया। पहले कमरे मे मैने एक देव और दो चामरवाले देखे, जो प्रत्येक रोग का नाश करते है। दूसरा कमरा मैने सोना, रत्न, हीरे, माणिक आदि से भरा देखा। तीसरे कमरे मे एक धनवान को याचकवर्ग को दान देते हुए देखा। चौथे कमरे मे एक पत्नी निष्ठापूर्वक अपने पति की सेवा कर रही थी। पांचवे कमरे मे मैंने पुत्र पौत्र आदि को विनय पूर्वक प्रेम से रहते हुए देखे। छठे कमरे मे मैने प्रजा के हित मे हर समय सलग्न एक राजा को देखा। और सातवे कमरे मे एक देव को मैने 'उवसग्गहर स्तोत्र' का जाप करते हुए देखा। मैंने धरणेन्द्र से पूछा—"यह देव 'उवसग्गहर स्तोत्र' का जाप क्यो करता है ? उत्तर मे धरणेन्द्र ने कहा—"इस स्तोत्र द्वारा घर मे नगर मे, देश मे सर्वत्र सभी प्रकार के भयो से रक्षा होती है और मनोवाञ्छित कार्य की सिद्धि भी होती है। जहाँ पर धर्म मनुष्यों के जीवन मे मूर्तिमान होता है, वहाँ उपर्युक्त सातो सुख आ जुटते है। इस प्रकार धरणेन्द्र ने मुझे वहाँ की सभी बाते वैक्रियलब्धि द्वारा बतलाई। आगे चलने पर मैने देखा एक तोता रत्नजटित

सोने के पिजरे मे बैठा है। वह मुझे देखते ही मनुष्य की भाषा मे बोलने लगा—"आइए पधारिये प्रियकर राजा! स्वागत है तुम्हारा! इस जगह महाभाग्यवान पुण्यशाली जीव ही आते है। तीसरे हिस्से में हम गये तो वहां पर मयूरों का नृत्य देखा। वे भी मनुष्य भाषा मे बोले—"हे राजन्! तुम्हारे दर्शन पाकर हम पवित्र हुए। वहाँ से हम चौथे हिस्से मे गये। जहाँ हमने सर्वत्र राजहस ही राजहस देखे। पाचवे हिस्से मै हमने स्फटिक रत्नों से मंडित एक बावडी (वापिका) देखी। छठे हिस्से मे हमने इन्द्र के सामानिक देवोंके भवन देखे। सातवे-हिस्से मे हमने देवागनाओं केझु ड के झु ड इधर से उधर घूमते हुए देखे। उससे और आगे चले तो हमने करोडों देवों से घिरे हुए धरणेन्द्र देव की सभा देखी जहां पर दिव्य नृत्य हो रहा था। देवों के साथ वहाँ पर १० दिन तक रह कर मैने प्रभु-भक्ति आदि धर्म-क्रियाएं की। देवों ने मुझे अपने दिव्य आहार का भोजन करवाया। उस का वर्णन करना भी दुःशक्य है। इसके बाद मैने धरणेन्द्र से प्रार्थना की—"धरणेन्द्र देव! अब मुझे मृत्युलोक में अपने नगर पहुंचा देने की कृपा करे। जिसमें वहां जाकर मै अधिक से अधिक धर्माचरण कर सकूं। साथ ही मेरे परिवार व प्रजाजन मेरी प्रतीक्षा करते होंगे उन्हें संतुष्ट कर सकूं और धर्म व पुण्य का माहात्म्य बता सकूं।"

धरणेन्द्र ने मुझे एक दैवी अंगूठी दी और उसका माहात्म्य बताते हुए उन्होने कहा—"जिस समय तुम भोजन के बर्तन के साथ इस अंगूठी का स्पर्श करा-दोगे, उस समय से उस बर्तन

मे भोजन कम नही होगा, जितने भी आदमियों को चाहोगे, उस भोजन से तृप्त कर सकोगे। उसके वाद धरणेन्द्र देव ने अपने एक देव को मेरे साथ देकर इस दिव्य घोडे पर विठा कर यहा भेजा। आगे का वृत्तान्त तो आप सब को विदित ही है।" प्रजाजनो ने सुन कर अतीव प्रसन्नता प्रकट की और धर्माचरण को प्रशसा करने लगे

उपसहार

इस प्रकार प्रियंकर राजा धर्मचरण में अत्यधिक रत रहने लगा। कुछ वर्षो वाद राजा ने अपने माता पिता की वडे ही ठाठवाट से श्री सिद्धाचल की यात्रा करवाई। राजा के पिता का सिद्धाचल तीर्थ की तलहटी मे ही स्वर्गवास हुआ। अतः वही उनके स्मारक के रूप मे एक देवकुलिका (दहरी) वनवाई। सिद्धक्षेत्र मे विपुल द्रव्य खर्च करके राजा ने धर्म की अत्यंत प्रभावना की। तीर्थयात्रा करके प्रियंकर राजा वापिस लौटा। अनेक वर्षो तक न्यायनीति पूर्वक राज्य चलाया। अंत मे अपनी वृद्धावस्था जान कर अपने पुत्र 'जयकर' को राजगद्दी पर विठाया और स्वय राजकार्य से निवृत्त होकर विशेष रूप से धर्माराधन करने लगा। इसी प्रकार धर्माराधना में अपना अन्तिम समय विताते हुए आयुष्य पूर्ण कर यहा से देह छोड कर प्रथम सौधर्म देवलोक देवरूप मे उत्पन्न हुआ। वहा से च्यवन कर महाविदेह क्षेत्र मे जाकर धर्माराधना करके मोक्ष प्राप्त करेगा।

—०—

उवसग्गहर स्तोत्र और उसको आराधनाविधि

वर्तमान काल में जैनधर्म के सभी सम्प्रदायों मे उवसग्गहर स्तोत्र प्रचलित है। जैन ही क्यों, जैनेतर लोग भी इसकी आराधना करते है।

पूर्वकाल में इस स्तोत्र की मूल ६ गाथाएं थी इससे इस स्तोत्र की आराधना करने वाले के पास आराधना करते समय हर बार धरणेन्द्र को आना पडता था। अतः धरणेन्द्र ने आचार्य भद्रबाहु स्वामी से प्रार्थना की कि—"इस स्तोत्र की आराधना करने वाले के पास मुझे हर समय उपस्थित होना पड़ता है। कई दफा में देवों की सभा में कार्य में व्यस्त रहता हूं इसलिए सहसा आने में बडी दिक्कत होती है। इसलिए आप कृपया इसकी छटी गाथा गुप्त कर दीजिये। मैं तो पांच गाथा के द्वारा आराधना करने वाले को भी सहायता अवश्य करूंगा। चाहे वहाँ बैठे-बैठे करूं या प्रत्यक्ष आकर करूं।" इस पर भद्रबाहु स्वामी ने छठी गाथा गुप्त कर दी तब से शेष ५ गाथाएं ही स्तोत्र की प्रचलित है। वे पांच गाथाएं इस प्रकार है—

उवसग्गहरं पासं, पासं वंदामि कम्मघणमुक्कं।
विसहर-विसनिन्नासं, मंगल कल्लाणआवासं ॥१॥
विसहर-फुलिंलग मंत्तं; कंठे धारेइ जो सया मणुओ।

तस्स गह-रोग-मारी, दुट्ठ-जरा-जंति-उवसामं ॥२॥
चिट्ठउ दूरे मंतो, तुज्झ पणामो वि वहु फलो होइ ।
नर-तिरिएसु वि जीवा, पावंति न दुक्ख-दो-गच्चं ॥३॥
तुह-सम्मत्ते लद्धे चिन्तामणि कप्प-पायवब्भहिए ।
पावंति अविग्घेणं, जीवा अयरामरं ठाण ॥४॥
इअ संथुओ महायस भत्तिभरनिब्भरेण हियएण ।
ता देव! दिज्ज वोहिं भवे भवे पास जिणचंद ॥५॥

इस स्तोत्र की रचना श्रुतकेवली आचार्य भद्रवाहु स्वामी ने अनेक महामंत्रों का रहस्य लेकर की है। इसके विधिवत् जाप करने पर धरणेन्द्र पद्मावती वैरुट्या आदि अधिष्ठायक देव सहायता करते हैं। इसके जाप से भूत. प्रेत डाकिनी शाकिनी व्यन्तर पिशाच आदि का उपद्रव नष्ट हो जाता है किसी प्रकार का भय नहीं रहता और आराधक व्यक्ति को सुख सम्पत्ति और आरोग्य आदि की प्राप्ति होती है, उसके महान कार्य की सिद्धि होती है।

सर्वप्रथम अठमतप (तेला) करके या अठम तप की शक्ति न हो तो तीन दिन तक लगातार आयंबिल या एकाशन कर के इस स्तोत्र का १२५०० (साढे वारह हजार) जप करने से यह स्तोत्र सिद्ध होता है।

प्रातः काल व्रह्म मुहूर्त (सूर्योदय से १ घंटा ३६ मिनट पहले) में जाग्रत होकर शौचादि से निवृत्त होकर एवं शरीरादि शुद्ध करके शुद्ध वस्त्र पहन कर श्री पार्श्वनाथ प्रभु की प्रतिमा

के सम्मुख या प्रतिमा न हो तो मन मे पार्श्वनाथ प्रभु का चित्र कल्पित करके उसके सम्मुख पूर्व दिशा मे अपना मुह रख कर वासक्षेप से पूजन कर एव धूपदीप करके (ये न हो तो भावों से पूजा करना) प्रथम नमस्कार मंत्र की १ माला गिननी चाहिये। तत्पश्चात् शुद्ध चित्त से एकाग्रता पूर्वक उवसग्गहर स्तोत्र की माला गिननी चाहिये।

उपर्युक्त विधि से जप न कर सके तो प्रतिदिन एक अनुकूल समय निश्चित करके पवित्र होकर इस स्तोत्र की माला फेरने में भी बहुत लाभ होता है।

उवसग्गहर स्तोत्र के यत्र और उनकी विधि

उवसग्गहर स्तोत्र का यत्र नं: १

इस उवसग्गहर यन्त्र मे कुल खाने २२१ (दो सौ इक्कीस) है उनकी गिनती इस प्रकार है--उवसग्गहर स्तोत्र की मूल गाथाएं पॉच है। उनके अक्षर १८५ (एक सौ पचासी) है। अर्थात्

प्रत्येक खाने मे एक-एक अक्षर रखने पर १८५ खाने भरते है। अव वाकी बचे ३६ खाने, वे चारो दिशाओं मे है। उन ३६ खानो मे से १२ खाने बाद करके शेष रहे २४ खानो में भी १८५ अक पूर्वाचार्यो द्वारा रखे गये है। इन चौबीस खानो मे अकों की राशि इस प्रकार रखी गई है किसी भी तरफ से गिनने पर उनकी गणना १८५ हो जायगी।

उवसग्गहर स्तोत्र यंत्र नंः २
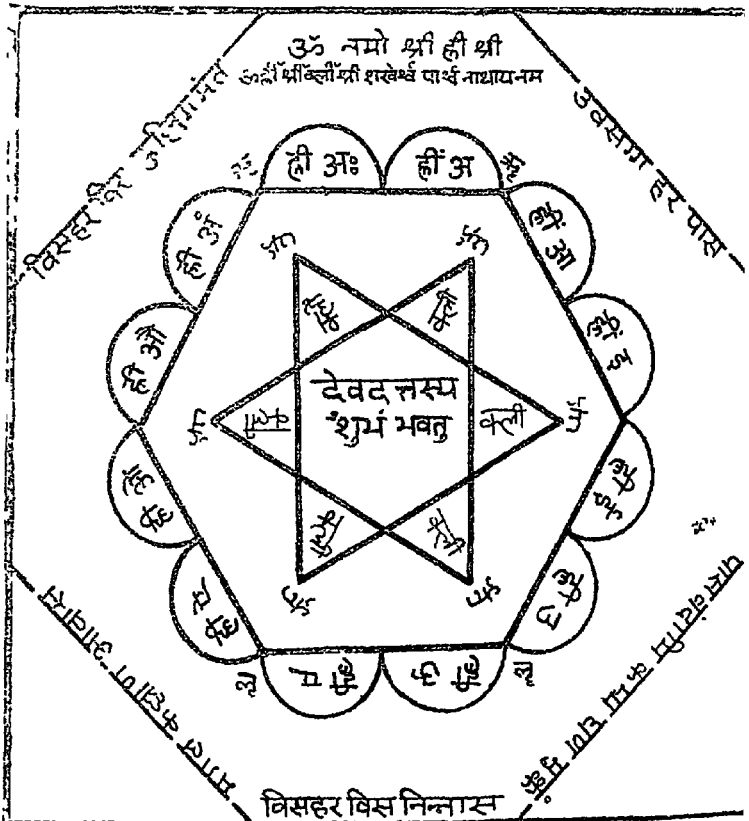
यह दूसरा यत्र है। दूसरे यन्त्र मे उवसग्गहर स्तोत्र की १ गाथा अंकित है। यदि पाचो ही गाथा लिखना चाहे तो इस यत्र के २१ कोठे वनाने चाहिये।

यह यन्त्र श्री शान्तिसागर यति की प्राचीन हस्तलिखित प्रति से उतारा गया है। यह यन्त्र अनुभवसिद्ध, फलदायी और चमत्कारी है।

ये दोनो यन्त्र उवसग्गहर स्तोत्र के है। रविवार पुष्य नक्षत्र हो या रविवार हस्तनक्षत्र हो अथवा गुरुवार पुष्य नक्षत्र हो या दिवाली का दिन हो और अपना चन्द्रस्वर चलता हो तव शुभ लग्न मे शुभ योग मे शुभ घड़ी मे और शुभ चौघडिये मे अष्टगध या सुगन्धी द्रव्य से भोजपत्र या उत्तम काश्मीरी कागज पर सोने चाँदी या अनार आदि की कलम से प्रसन्नचित्त होकर ये यत्र लिखने चाहिये। यत्र सिद्ध करने के लिए शुद्ध होकर पूर्व या उत्तर दिशा मे मुंह करके घी का दीपक और उत्तम सुगन्धित अगरवत्ती का धूप करके उवसग्गहर स्तोत्र की १ माला फेरना चाहिए और तदनन्तर पञ्चामृत का होम करना चाहिए। फिर इस यन्त्र को सोने चादो या ताम्वे के तावीज मे वन्द करके धूप देकर दाहिने हाथ या गले मे धारण करना चाहिए।

इन यत्रों मे से किसी एक यत्र के धारण करने से सभी प्रकार के रोग-शोक व दुष्ट ग्रह शान्त हो जाते है। आठों भय दूर हो जाते है, भूत प्रेत पिशाच आदि का उपद्रव नष्ट हो जाता है। लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। आरोग्य, रूप विनय

गुण, आज्ञाकित पुत्र, धन ऐश्वर्य, इष्ट मित्र, अच्छे कर्मचारी और न्यायालय मे विजय आदि प्राप्त होते है।

सोने, चाँदी या ताम्बे के पत्र पर उपर्युक्त शुभ योग मे खुदवा कर उसकी प्राणप्रतिष्ठा करके घर मे सदा श्रद्धापूर्वक रखने और उसका ध्यान करने से धन, धान्य, यश, कीर्ति आरोग्य और अक्षय सम्पत्ति प्राप्त होती है। इस यत्र को धोकर उसका पानी पीने से सभी प्रकार के ज्वर, फोडा, घाव आदि मिट जाते है। यत्र धोए हुए उक्त पानी को घर के चारो कोनो मे छीट देने से किसी भी तरह के रोग का उपद्रव घर मे नही होता, निम्न कोटि के देव, अग्नि और सर्प आदि जहरीले जन्तु तो दूर ही भाग जाते है। इस यत्र को धोकर उसका जल पीने से भूत, प्रेत डाकिनी, शाकिनी आदि सब दूर भाग जाते है गर्भवती स्त्री पीए तो उसे किसी प्रकार की प्रसव-पीडा नही होती तथा इस यन्त्र का जल पीने से १८ प्रकार का कोढ़ रोग, सात प्रकार के ज्वर, ८४ प्रकार की वातव्याधि एवं सर्प आदि विषैले प्राणियों का विष दूर हो जाता है।

इस यन्त्र को सोना चाँदी या काँसे की थाली पर अष्टगंध से उपर्युक्त शुभ योग में विधिपूर्वक लिख कर धूप दीप आदि पूर्वक इसकी १ माला फेरकर उस थाली में लिखे यन्त्र को धोकर पीने से सम्पूर्ण इष्ट-सिद्धि प्राप्त होती है। एक वर्ण वाली गाय के दूध में इस लिखे हुए यन्त्र को धोकर वन्ध्या स्त्री को पिलाने से वह गर्भ धारण करती है। सम्पूर्ण रोग नष्ट हो जाते है।

इस यत्र की सिद्धि के उत्कृष्ट विधि यह है कि अष्टगध से भोज पत्र या उत्तम कागज पर या कांसी, तावा, सोना या चाँदी के पत्र पर उपर्युक्त विधि से इन दोनो मे से कोई भी एक यत्र लिख कर शुभ चंद्र देख कर उवसग्गहर स्तोत्र की साधना शुरु करना। ६ महीने मे इस स्तोत्र का सवा लाख जाप पूरा करना। वीच मे प्रत्येक वदी १० के रोज या विशाखा नक्षत्र में एकाशन करना, पोप शुकला-१० के दिन आयविल करना, भूमि पर सथारा (सादा विछौना) करके सोना' वृह्मचर्य पालन करना, रात्रि भोजन का त्याग करना अभक्ष्य व कदमूल का त्याग करना मौन रखना (जप के समय) सत्य वोलना जाप करते समय धूप दीप सम्मुख रखना जप करते समय मुख पूर्व या उत्तर दिशा मे रखना। नीले या सफेद विना फटे और विना सिले हुए वस्त्र धारण करना। जाप करने की माला सोने, चाँदी, प्रवाल, रेशम, सूत या नीले रग का होनी चाहिये। इस प्रकार १२५००० जप पूर्ण होने के वाद एक, अठारह, सत्ताइस या एक सौ आठ वार प्रतिदिन जप करना चाहिये।

—o—

अनेकमंत्रगर्भितं परमप्रभावकम्

।। उवसग्गहरं श्री पार्श्वनाथ स्तोत्रम् ।।

उवसग्गहर पास पासं वन्दामि कम्मघगमुक्क ।
विसहर बिस निन्नासं मगलकल्लाण-आवास ॥१॥

विसहर फुलिंगमत्तं कण्ठे धारेइ जो सया मणुओ ।
तस्स गह-रोग-मारी-दुट्ठजरा जंति उवसाम ॥२॥

चिट्ठउ दूरे मतो तुझ पणामो वि बहुफलो होइ ।
नर-तिरिएसु वि जीवा पावंति न दुक्खदोगच्च ॥३॥

ॐ अमरतरु-कामधेणु-चिंतामणि कामकुंभ माइया ।
सिरिपासनाहसेवाग्गहाण सव्वे वि दासत ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं ऐं ॐतुह दसणेण सामिय,पणासेइ रोग-सोग-दोहग्गं ।
कप्पतरुमिव जायइ, ॐ तुह दंसणेण सव्व लहेऊ स्वाहा ॥५॥

ॐ ह्रीं नमिऊण विग्घणासय मायावीएण धरणनागिंद ।
सिरिकामराजकलियं पासजिणंदं नमंसामि ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं सिरिपासविसविसहर विज्जातेण झाण ज्झाएज्जा
धरण पउमावइ देवी ॐ ह्रीं क्ष्म्ल्व्र्यूं स्वाहा ॥ ७ ॥

ॐ जयउ [4] धरणिंदप उमावईय नागिणी विज्जो
विमलज्झाण सहिओ ॐ ह्रीं क्ष्म्ल्व्र्यूं स्वाहा ॥८॥

ॐ णाम पासनाह ॐ ह्रीँ पणमाम परम भत्तीए।
अट्ठक्खरधरणंदो पउमावइ पयडिचा कित्ती ॥ ९ ॥

जस्स पयकमलमज्झे सया वसइ पउमावई य धरणिदो।
तस्स नामेण सयल विसहरविसं नासेइ ॥ १० ॥

तुह सम्मत्ते लद्धे, चिंतामणिकप्पपायवब्भहिये ।
पावंति अविग्घेणं जीवा अयरामर ठाण ॥ ११ ॥

ॐ नट्ठट्ठमयट्ठाणे पणट्ठकम्मट्ठनट्ठसंसारे ।
परमट्ठनिट्ठिअट्ठे अट्ठगुणाधीसरं वंदे ॥ १२ ॥

इअ संथुओ महायस! भत्तिब्भरनिब्भरेणहियएण ।
ता देव! दिज्झ बोहि भवे भवे पास जिणचंद ॥१३॥

तुह नामसुद्धमंत सम्म जो जो जवइ सुद्धभावेण।
सो अयरामर ठाण पावइ न य दोग्गइं दुक्ख ॥१४॥

ॐ पंडुभगंरदा॑ कास सास च सूलमाईणि ।
पास पहुप भावेण नासंति सयल रोगाइ ॥ १५ ॥

ॐ विसहर दावानल साइणि वेयाल मारि आयंका।
सिरि नीलकंठ पासस्स समरणमितेण नासंति ॥१६॥

पन्नासं गोपीडा कूरग्गलदंसण भयं काये ।
आवी(वि)न हुंति एएतहवि तिसंझं गुणिज्जासु॥१७॥

पि (पी) डजंत भगंदर खाससासलूतह (निव्वा) हं।
श्री(सिरि) सामलपासमहंत नाम पऊरपऊलेण॥१८॥

ॐ ह्रीँ श्री पासधरणसंजुतं विसहर विज्जं जवेइ सुद्धमणेणं।
पावेई इच्छियसुह ॐ ह्रीँ श्रीँ क्ष्म्ल्व्र्यूँ स्वाहा ॥ १९ ॥

रोगजलजलणविसहर चोरारिमइंदगयरण भयाइं।

पासजिगनाम सकितणेग पसमंति सव्वाइ ॥ २० ॥

प्रत्यन्तरे प्राप्त अन्य गाथाए

तं नमह पासनाहं, धरणिंदनमसिय दुह पणासेइ ।
तस्स पभावेण सया, नासति सयल दुरियाइं ॥१८॥

एए समरंताणं,मणेणिं न दुहं वाही नासमाहि दुक्खं ।
नाम चिय मतसम, पयडो नत्थित्थ सदेहो ॥१९॥

जलजलण तह सप्पसीहो, चोरारी सभवे वि खिप्प ।
जो समरेइ पासपहु, पहवइ न कया वि किंचि तस्स ॥ २० ॥

इहलोगट्ठीं परलोगट्ठी, जो ससरेइ पासनाहं तु ।
तत्तो सिज्झेइ न, कोसइ (संति) नाह सुरा भगवंतं ॥२१॥

अन्य प्रति मे १३ पद्य है जिस मे से १० से १३ प्रत्यन्तर की ऊपर दी गई है। १ से ५ स्तोत्रानुसार है। ६, ७, ९ स्तोत्रानुसार ११ से १३ है। ८वा पृथक् इस प्रकार है—

ओ नमिऊण वि पुण साय मायावीएण धरणनागिंदं ।
सिरीकाम राज्यं क्लीँ पासजिणदं नमसामि ॥ ८ ॥

—०—

देयं । चतुर्दश क्री कारेण पर बेष्टियेत् । तत् पश्चात् षोडश स्वरै वन्य पूरितव्यं । तत् पश्चात् द्वात्रिंशत् ।। गाथा ।। अह दसणेण सामी । पणासि रोग शोक क्षेहगम । कप्पयउं मच्चा जायइ । त्रुह: । अह दसण समा फल हे ड । ब्लूकार अक्षराणं वलय पूरतव्यं । तत. ओं नमो भगवते ह्री ब्ली आं घ्रूं ब्रां छू आ क्रौ श्री पार्श्वनाथाय । दुरक. रोग सोक हरणाय दुष्टारि विनाशाय अटल बुद्धि प्राक्रमाय वर्द्धनाय श्री पार्श्व यक्षेभ्यो नमः । ह्री स्वाहा । एतत्र रस त्रि मचा क्षराणा बलयं पूरतव्यां । वाह्य माया विजेन वेष्टन कर्यं । इति द्वितिय यन्त्र विधि: । अथ तृतिय यन्त्र रचना विधि । इद यन्त्र कुकुम कस्तुरीका: सुरभी द्रव्यौ: यंत्र भूर्य पत्रे वल्क पटे । वा ताम्र पत्रे । शुभ दिने । शुभ योगे । यंत्र लिखनीयं । नैवेद्य धुप दीपादिमिष्ट द्रव्यौ यंत्रं अर्चन कार्यं । पश्चात् एतत् मत्रेण । ओं ह्री श्री श्रीं पार्श्वनाथाय । श्रेय कल्याण वर्द्धन । ह्रां ह्री ह्रू ह्रं श्री पार्श्व यक्षेभ्यो नमः । अनेन मंत्रेण अष्टोत्तर शतवार । शुक्ल पक्षेण । यंत्र प्रशजनं कृत्वा । पश्चात् यंत्र मस्तके । वा कठे वा । हस्ते धारणीयं । अस्य यंत्र प्रभावात् । रोग सोक दुख: दलिद्र दुष्टारिष्टोप सर्गा न भवती । अस्य षष्ठम गाथा मत्रेण सयुक्त अष्टो गाथा । अमर तरू काम धेणु । चिंतामणि काम कुंभ माईया । श्री पासणाह रोग । हाण सछेदा सततर सत बार याय कृत्वा । पश्चात् यंत्र भडारे सस्थाप्यते । भडारे वस्तु अत्यात भवति । वस्तु अंत न आनामि । अत्र पश्चात् । यंत्र । गाथा २ । मत्रे साध्यकस्य कृष्ण वेष । कृष्णांसन: । कृष्ण जप माल: कायां दिक्षण दिक् मुख कृत्वा । मुखाग्रे यंत्र स्थापित । गाथा । पूर्वोक्त मत्र द्वय न साधन कृत्वा । यप लक्ष पर्यंत कृत्वा । पश्चात् लक्ष पर्यंत मिराचघृत सयुक्त होम

कार्यं । दिन २१ मध्ये शत्रुनाशम सभवति । लक्ष्मी निमित्ते ।
लाल वेषात् साधनं कृत्वा । पूर्वोक्तं विधानात् लक्ष्मी प्रभावौ
अत्यंत भवति । निश्चयेन कृत्वा । ६ । अमर काम धेणुं इति ।
अथात्र सप्तम गाथायां । दुष्ट देवौपसर्गा पर चक्र नगर राज्यो-
पसर्गहर कल्प—वृक्ष काम धेनु चिंतामणि समय कल्याणं कर
यंत्र विधानं साध्यंति । अत्र मध्ये । हल्कीं । मध्ये देवदत्ताभि-
नामध्येय । चतुर्दश यकारेण वेष्टएत् । पश्चात् पोडश ह्मौ,
अक्षराणं बलयं पूरएत् । तत् पश्चात । तस्यौपरि । चतुर्वी-
शति भ्रूकार । अक्षराण बलयं पूरएत् । तत् पश्चात
तस्यौपरि । ओं नमो भगवते श्री पार्श्वनाथ तिर्थं कराय ।
पर चक्र राज्यौपसर्गा भयः । बिछेदय २ दुष्टान् नाशय २ ओं
ही हां हूं हं श्री पार्श्वयक्षेभ्यौनमः । एतत् वाण अष्ट मंत्राक्षरैः
बलयं पूरयेत् । वाह्ये माया वीजेन बेष्टयेत् । यंत्र ७ इदं यंत्र
सूरभी द्रव्यौ यन्त्र भूर्यपत्रे वा बल्कं पटे । वा ताम्रपत्रे वा रूप
पत्रे यन्त्रं शुभ दिने शभ योगे । दीपोत्सवे दिन यन्त्र लिषनीयं ।
पंचामृत होम कार्यं । नैवेद्य दोपं धूप अष्ट द्रव्यौ यन्त्र अर्चनं
कार्यं । पश्चात् ओ श्रीं क्ली द्रां द्रीं पर चक्र भयोपसर्गा
निवारणे श्री पार्श्वयक्ष अधिष्ठित देव । ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लं स्वाहा ।
अनेन मत्रेण अष्टौत्तर सत वारं । मन्त्र जाप्यं कार्यं । पीत
पुष्पेन पूजन कृत्वा । पश्चात् यन्त्र मस्तके । वा हस्ते धारएत् ।
दुष्ट देवौपसर्गा न भवंति । ततः पश्चात् । पीत वस्त्र पीतासन ।
पीतध्यानेन । उत्तरस्य दिशं मुख कृत्वा सन्मुखे यन्त्र स्थापन
कृत्वा । सप्तम गाथा मंत्र पूर्वोक्त साधन कार्यं । लक्ष सवा
पर्यंतेन । दिन द्वात्रिसत् मेव दुष्टो देवोपसर्गा पर चक्र राज्यौ-
पसर्गा प्रसांत्यं भवति । अस्य यन्त्रस्य धज्जायां विधि-
वधानात् । संलेख्य रणमध्ये । वा नगरस्यौ धारौ परीस्थाप्यत ।

पर चक्र राज राज्योपसर्गा भय विमुक्ता भवंति। कल्प वृक्ष कामं धेनू चिन्तामणि समः। श्रेय कल्याणं करोती। निश्चय मेव।७। इत्तसथुत्तो मह्मगस्स। इति गाथा। अस्या अष्टम गाथा या शातिक पौष्टिक भूत प्रेत शाकिनी ह्वरा रिति नासन सृर्वारिष्याकर दुष्ट को उछापनं पूरक्षो नक्षेमकरणादि कार्य साधकः। यंत्रा विधान शाध्यति ।।८।। अत्र मध्ये। हनौ मध्ये। देवदत्ताभि नाम दत्वा। क्षेकार दिग् पवा क्षराणा वेष्टएत् तस्योपरि षोडश स्वराणा वलय पूरएत्। तत पश्चात् क्रौकार चतुर्विशति। अक्षराणां वलय पूरएत् तस्य वलयो परि ॐ पार्श्वनाथाय श्रीं क्ली द्रां द्री श्रू शात्यं कुरू भूत प्रेत पिशाच। शाकिनी डाकिनी ह्वारारि रिपोपसर्गा हर श्री ह्लां ह्लीं श्रीं पार्श्वयक्षेभ्यो नमः। एतत् षोडश अक्षराणां वलयं पूरयेत्। वाह्ये माया विजेन यंत्र वेष्टएत् पंचम विधिः। इदं यंत्र गौरोचन मृगनाभि कर्पूरादि अष्ट द्रव्यै यंत्र पूजन कार्यं। पश्चात् यंत्र भूर्यपत्रे वा निलमय वस्त्रे। वा ताम्र पत्र मध्ये यंत्र लिखनीय। नवेद्य धूप दीपादी अष्ट द्रव्यै यंत्र पूजन कार्य। पश्चात् ॐ नमो श्री क्ली ह्नौ ह्ल्की भूत प्रेत पिशाच शाकिनी व्यतरादयः सर्वो पसर्गा हर श्री पार्श्वयक्षेभ्यो ह्ला ह्ली ह्लैं ह्ल स्वाहा अनेन मंत्रेण अष्टोत्तर शत वार रक्त पुष्पेन पूजा कृत्वा। पश्चात् यंत्र कंठ वा हस्ते धारणात् भूत प्रेत शाकिनी व्यतरा हरादि अन्य दुष्टोपसर्गा न भवंति। ज्वरादि सर्गादि गुण न् व द रहो व शाति भवति। भूप सन्मान वृद्धि भवति। अष्टगाथा पूर्वोक्त मंत्रेण स्मरणात् यंत्र पार्श्वे रक्षणात्। इति उवस्सग हर कल्प समाप्तं ॥

— — —